ओंकारबिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नमः ॥

परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू का
अवतरण दिवस : २९ अप्रैल

अंक : १४८
अप्रैल २००५
मूल्य : रु. ६/-

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

अकोला (महा.)

सत्संग जीवन का कल्पवृक्ष है ।

पूज्य बापूजी के सान्निध्य में हरिरस की प्यालियाँ पीते हुए, दिल की चुनरिया को प्रभु-प्रेम में रँगाते हुए अकोलावासी मानों कह रहे हैं : 'ऐसी रँग दे कि रंग नाहीं छूटे...'

ब्योहारी (म.प्र.) का विशाल भंडारा

लोकसंत पूज्य बापूजी का सहज स्वभाव ही है कि समाजोत्थान हेतु सत्संग और सेवा का सुंदर संगम कर साधकों के जीवन को भक्ति, ज्ञान व कर्म योग से सँजोना । वे समाजरूपी भगवान की सेवा का संदेश सेवाकार्यों की सुवास के माध्यम से ही समस्त संसार को दे रहे हैं ।

बिलासपुर (छ.ग.)

'बापूजी ! हमारे जीवन की छोटी-से-छोटी गुत्थी भी आप कैसे जान लेते हैं ? और जान ही नहीं लेते, मुसकाते-मुसकाते पलभर में सुलझा भी देते हैं !' - बिलासपुरवासियों के अंतर में उमड़ रहे भाव ।

वर्ष : १५ अंक : १४८ अप्रैल २००५ चैत्र-वैशाख, वि.सं.२०६२ मूल्य : रु. ६-००

ऋषि प्रसाद

अनुक्रम

'परिप्रश्नेन...' २
काव्य गुंजन ३
✲ पावन अवतरण दिवस
कुलं पवित्रं जननी कृतार्था... ४
भक्त चरित्र ६
✲ महान भगवद्भक्त : प्रह्लाद
पर्व मांगल्य ९
✲ सद्गुणों की खान : भगवान श्रीराम
✲ आदर्श भक्त हनुमानजी ११
वे दुःखों से पार हो जाते हैं १०
कथा प्रसंग १२
✲ हनुमानजी की श्रीराम-प्रीति
ऐश्वर्य-आरोग्यप्रद सूर्य मंत्र १३
संत महिमा १४
✲ संत की चरणरज
स्पर्शदोष से बचें... १६
शास्त्र महिमा १७
✲ 'श्री योगवासिष्ठ' का परिचय
सुखमय जीवन के सोपान १९
✲ आदर्श जीवन
भागवत प्रसाद २०
✲ मनुष्यमात्र को क्या करना चाहिए ?
साधना पाथेय २२
✲ कुंडलिनी योग
आप कहते हैं... २४
✲ विद्वानों, चिंतकों और चिकित्सकों की दृष्टि में ब्रह्मचर्य
गौमाता का उपहार ✲ अमृततुल्य गौदुग्ध २६
कोष्ठशुद्धि कल्प २७
योगामृत २८
✲ शीघ्र लाभकारी प्राणायाम-चिकित्सा
शरीर स्वास्थ्य २९
✲ भोजन : एक नित्य यज्ञकर्म
रंग : स्वास्थ्य का एक अंग ३०
✲ ब्रह्मवृक्ष पलाश के विभिन्न लाभ
✲ रंगों का स्वास्थ्य पर प्रभाव
भक्तों के अनुभव ३१
✲ आग से रक्षा ✲ आयुर्वेद का चमत्कार
संस्था समाचार ३१
✲ होली के रंग पूज्य बापूजी के संग...

सद्गुणों की खान :
भगवान श्रीराम

महान
भगवद्भक्त

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : हार्दिक वेबप्रिंट, राणीप और विनय प्रिंटिंग प्रेस, अमदावाद।
सम्पादक : श्री कौशिकभाई वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक	रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक	रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक	रु. २००/-
(४) आजीवन	रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक	रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक	रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक	रु. ३००/-
(४) आजीवन	रु. ७५०/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक	US $ 20
(२) द्विवार्षिक	US $ 40
(३) पंचवार्षिक	US $ 80
(४) आजीवन	US $ 200

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	१२०	५००
नेपाल, भूटान व पाक में	१७५	७५०
अन्य देशों में	US $ 20	US $ 80

कार्यालय **'ऋषि प्रसाद'** श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें।

सबसे बड़ा भोगी

सबसे बड़ा भोगी है - ज्ञानी । 'विश्व में भोग भोगनेवाले समस्त जीव मेरा ही स्वरूप हैं ।' - ऐसा उसका अनुभव होता है । सबसे बड़ा त्यागी है - संसारी क्योंकि वह महान परमात्म-सुख को त्यागकर बैठा है । परमात्मा को त्यागकर नश्वर क्षुद्र चीजों को पकड़कर बैठा है । बताओ, उससे बड़ा त्यागी तुम्हें कौन मिलेगा ?

प्रश्न : परम पूज्य बापूजी ! इस नश्वर संसार में मनुष्य का वास्तविक कर्तव्य क्या है ?

पूज्य बापूजी : संसार असार है । शरीर रोगों का घर है । मन मलिन है । बुद्धि विक्षिप्त है । चित्त चंचल है और मृत्यु नित्य नजदीक आ रही है । ऐसे अवसर पर मनुष्य का वास्तविक कर्तव्य है असार संसार से मोह-माया-अभिमान हटाकर परमात्मा से मन जोड़ लेना और अपने वास्तविक स्वभाव में जागना, स्वधर्म का पालन करना ।

कर्तव्यो धर्मसंग्रहः ।

'स्वधर्मरूपी पुरुषार्थ का संग्रह, आचरण, अनुष्ठान करना ही कर्तव्य है ।'

प्रश्न : सबसे बड़ा भोगी और सबसे बड़ा त्यागी कौन है ?

पूज्य बापूजी : सबसे बड़ा भोगी है - ज्ञानी । वह सारे ब्रह्मांड को अपने भीतर ही महसूस करता है । 'विश्व में भोग भोगनेवाले समस्त जीव मेरा ही स्वरूप हैं ।' - ऐसा उसका अनुभव होता है । अतः ज्ञानी जैसा भोग भोग सकता है ऐसा भोग दूसरा कोई जीव नहीं भोग सकता और सबसे बड़ा त्यागी है - संसारी । अखिल ब्रह्मांड में महान से भी महान और श्रेष्ठों से भी श्रेष्ठ अगर कुछ प्राप्त करने जैसा है तो वह है परमात्म-सुख । उस महान सुख को त्यागकर बैठा हुआ संसारी ही महान त्यागी कहा जायेगा । संसारी परमात्मा को त्यागकर नश्वर क्षुद्र चीजों को पकड़कर बैठा है । बताओ, उससे बड़ा त्यागी तुम्हें कौन मिलेगा ?

प्रश्न : ब्रह्माभ्यासी किन्हें कहते हैं ?

पूज्य बापूजी : जिनके रात-दिन अध्यात्म-शास्त्र के चिंतन में व्यतीत होते हैं और जो वासना के दास नहीं होते, जिनके पापों का अंत हुआ है और पुण्य बढ़े हैं, जिनकी भोग-वासना क्षीण हुई है, बुद्धि वैराग्यरूपी रंग से रँगी है और वृत्ति आत्मानंद की ओर ही दौड़ती है, जो राग-द्वेष से मुक्त हुए हैं और जिन्होंने जगत का अत्यंत अभाव जाना है कि यह जगत आदि में उत्पन्न ही नहीं हुआ, जो दृश्य को असत् जानकर उसमें आसक्त नहीं होते, परम तत्त्व को सत्य जानते हैं और इस युक्ति से अभ्यास करते हैं, ऐसे उदार आत्माओं को 'ब्रह्माभ्यासी' कहते हैं ।

प्रश्न : ईश्वर को मानने से क्या लाभ होता है ?

पूज्य बापूजी : ईश्वरीय आनंद मिलेगा, बुद्धि

और सबसे बड़ा त्यागी कौन है ?

विकसित होगी, ईश्वर के दिव्य गुण प्राप्त होंगे और अंत में ईश्वर से मिल जायेंगे, जन्म-मरण का चक्र छूट जायेगा।

प्रश्न : ईश्वर में स्थिति पाने के लिए क्या करना चाहिए ?

पूज्य बापूजी : ईश्वर में स्थिति पाने के लिए मनुष्य को अपनी बुद्धि को जगत के नश्वर पदार्थों से हटाकर अमर आत्मा में लगाना चाहिए, उसे आत्मविषयिणी बनाना चाहिए। इस हेतु आत्मा के विषय में ही बार-बार सुनें और उसीका मनन करें। जीवन में कुछ नियम बना लें और उन पर दृढ़ रहें। अपने मन पर कड़ी निगरानी रखें, सदैव सजग रहें।

संयम-नियम का पालन करने से सच्चाई आती है और सच्चाई से सत्य को जानने की जिज्ञासा पैदा होती है, जिससे श्रद्धा दृढ़ होती है व बुद्धि में सत्त्व आता है जो ईश्वर में स्थिति कराता है।

मनुष्य में पशुता भी छुपी है, मानवता भी छुपी है और देवत्व भी छुपा है। उसे चाहिए कि वह पशुता को मिटाकर मानवता को निखारे और मानवता को निखारते-निखारते अपने ईश्वरत्व, अपने ईश्वरीय अंश को जगाये।

प्रश्न : पशुता कैसे छूटती है और ईश्वरीय अंश कैसे जगता है ?

पूज्य बापूजी : बच्चे की बेवकूफी कैसे छूटती है ? शिक्षक के कहे अनुसार चलने से बच्चे की बेवकूफी छूटती है और वह विद्वान बनता है। ऐसे ही मनुष्य की पशुता अपने-आप नहीं छूटती। जब वह अपने मन को सद्गुरु की आज्ञा में चलायेगा तब पशुता आसानी से छूटेगी।

शिष्य जब सद्गुरु की आज्ञा में चलता है, तब पशुता और मानवता को बाधित करके अपना ईश्वरीय अंश जगा पाता है। इसीलिए कहा गया है :

गुरुकृपा हि केवलं शिष्यस्य परं मंगलम्।

प्रश्न : दुःख क्यों होता है और वह कैसे मिटता है ?

पूज्य बापूजी : बेवकूफीभरी मान्यता से दुःख होता है और 'मैं दुःखी हूँ' - ऐसा सोचते रहने से दुःख बढ़ता है।

कोई किसीके सुख-दुःख का कारण नहीं है। मनुष्य के दुःख का कारण उसका अपना अज्ञान, अपनी नासमझी और अपने कर्म हैं।

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता।
निज कृत करम भोग सबु भ्राता॥
(श्रीरामचरित. अयो.कां. : ९१.२)

जो दूसरों को अपने दुःख का कारण मानते हैं उनकी बेवकूफी बढ़ती है, उनका दुःख बढ़ता है। मनुष्य को चाहिए कि वह अपने दुःख का कारण अपनी बेवकूफी मानकर उसे हटाने का प्रयास करे।

धन से, सत्ता से दुःख नहीं मिटता। दुःख तो मिटता है दुःखहारी प्रभु के ज्ञान से। संसार की चीजों में परिणाम दुःख, ताप दुःख और संस्कार दुःख लगे ही रहते हैं। परमात्म-ज्ञान में, परमात्म-शांति में, परमात्म-आनंद में इन दुःखों का प्रवेश ही नहीं है।

पावन अवतरण दिवस

पलक पाँवड़े अभिनंदन को हमने पथ में बिछाये हैं।
अर्पित हैं स्वीकार कीजिये श्रद्धा-सुमन जो लाये हैं॥
धारण करते धनुष कभी और वंशी कभी बजाते हैं,
जब-जब होती हानि धर्म की प्रभू धरा पर आते हैं।
घोर निराशा हरने भगवान आशारामजी आये हैं॥
इंद्रधनुष उतरा अंबर से चरण चूमने गुरुवर के,
साधक बने गोपियाँ झूमें संग-संग प्यारे सुंदर के।
आपने अपनी मधु चितवन से सबके चित्त चुराये हैं॥
परम पवित्र दिवस आया है मंगल घड़ियाँ लाया है,
आज के शुभ दिन ही तो हमने प्यारा सद्गुरु पाया है।
श्रीचरणों में आकर हमने अपने भाग्य जगाये हैं॥
अजर-अमर गुरुदेव आप हों हिरदय की भावना यही,
दिन-दिन तेज प्रताप बढ़े हम सबकी है कामना यही।
भावों का ये पुष्पहार हम भक्त भेंट में लाये हैं॥

- 'चाँद' लखनवी, सहारा स्टेट्स, लखनऊ।

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था । वसुन्धरा

(संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से)

शास्त्रों में भगवान के कई अवतार बताये गये हैं। उनमें से एक है नित्य अवतार, जो संत-महापुरुषों के रूप में होता है। ऐसे नित्य अवतारस्वरूप अनेक संत इस धरती पर अवतरित हुए हैं, जैसे - वल्लभाचार्य, शंकराचार्य, निंबकाचार्य, कबीरजी, नानकजी, श्री रामकृष्ण परमहंस, परम पूज्य श्री लीलाशाहजी बापू।

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था।
वसुन्धरा पुण्यवती च येन॥

अर्थात् जिस कुल में वे महापुरुष अवतरित होते हैं वह कुल पवित्र हो जाता है, जिस माता के गर्भ से उनका जन्म होता है वह भाग्यवती जननी कृतार्थ हो जाती है और जहाँ उनकी चरणरज पड़ती है वह वसुंधरा भी पुण्यवती हो जाती है।

साधारण जीव का जन्म कर्मबंधन से, वासना के वेग से होता है। भगवान या संत-महापुरुषों का जन्म ऐसा नहीं होता। वास्तव में तो उनका मनुष्यरूप में धरती पर प्रकट होना, जन्म लेना नहीं अपितु अवतरित होना कहलाता है।

भगवान या संत-महापुरुष तो लोकमांगल्य के लिए, किसी विशेष उद्देश्य को पूरा करने के लिए अथवा लाखों-लाखों लोगों द्वारा करुण पुकार लगायी जाने पर अवतरित होते हैं अर्थात् हमारी सद्भावनाओं को, हमारे ध्येय को, हमारी आवश्यकताओं को साकार रूप देने के लिए जो प्रकट हो जायें वे अवतार या अवतारी महापुरुष कहलाते हैं।

शरीर का जन्म होना और उसका जन्मदिन मनाना कोई बड़ी बात नहीं है बल्कि उसके जन्म का उद्देश्य पूर्ण कर लेना यह बहुत बड़ी बात है। जिन्होंने इस उद्देश्य को पूर्ण कर लिया है, ऐसे परब्रह्म-परमात्मा में जगे हुए महापुरुषों का अवतरण-दिवस हमें भी जीवन के इस ऊँचे लक्ष्य की ओर प्रेरित करता है, इसलिए वह उत्सव मनाने का एक सुंदर अवसर है और सबको मनाना चाहिए।

जहाँ में उसने बड़ी बात कर ली।
जिसने अपने-आपसे मुलाकात कर ली॥

धरती पर लगभग साढ़े छः सौ करोड़ मनुष्य विद्यमान हैं और उनमें से लगभग पौने दो करोड़ लोगों का हर रोज जन्मदिवस होता है। जन्मदिवस मनाने का लाभ तो तभी है जब जीवन में कुछ-न-कुछ उच्च संकल्प लिया जाय। मान लो आपके जीवन के ३० वर्ष पूरे हो गये और अब आप ३१वें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। आप बीते हुए वर्षों का निरीक्षण करें कि मुझसे क्या-क्या गलत कार्य हुए हैं। जन्मदिवस के शुभ अवसर पर उन गलत कार्यों को दुबारा न करने का व नये शुभ कार्य करने का संकल्प लें। अगर आप ऐसा करते हैं तब ही जन्मदिवस मनाने का महत्त्व है। वास्तव में ज्ञानदृष्टि से देखा जाय तो आपका जन्म कभी हुआ ही नहीं है।

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥

'यह आत्मा किसी काल में भी न तो जन्मता है और न मरता ही है तथा न यह उत्पन्न होकर फिर होनेवाला ही है क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है।

पूज्य बापूजी का
अवतरण-दिवस : २९ अप्रैल

पुण्यवती च येन ॥

आपको इस बात का अनुभव हो जाय कि संसार क्षणभंगुर है, परिस्थितियाँ आती-जाती रहती हैं, शरीर जन्मते-मरते रहते हैं परंतु आत्मा तो अनादि काल से अजर-अमर है।

शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता है।'

(श्रीमद्भगवद्गीता : २.२०)

लोग बोलते हैं : ''बापूजी ! आपको बधाई हो।''

''किस बात की बधाई ?''

''आपका जन्मदिवस है।''

ये सब हम नहीं चाहते क्योंकि हम जानते हैं कि 'जन्म तो शरीर का हुआ है, हमारा जन्म तो कभी होता ही नहीं।'

जन्मदिवस पर हमें आपकी कोई भी चीज-वस्तु, रुपया-पैसा या बधाई नहीं चाहिए। हम तो केवल आपका मंगल चाहते हैं, कल्याण चाहते हैं । आपका मंगल किसमें है ?

आपको इस बात का अनुभव हो जाय कि संसार क्षणभंगुर है, परिस्थितियाँ आती-जाती रहती हैं, शरीर जन्मते-मरते रहते हैं परंतु आत्मा तो अनादि काल से अजर-अमर है।

जन्मदिवस की बधाई हम नहीं लेते... फिर भी बधाई ले लेते हैं क्योंकि इस निमित्त भी आप सत्संग में आ जाते हैं और स्वयं को शरीर से अलग चैतन्य, अमर आत्मा मानने का, सुनने का अवसर आपको मिल जाता है। इस बात की बधाई मैं आपको देता भी हूँ और लेता भी हूँ...

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।
असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

'जो मुझको अजन्मा अर्थात् वास्तव में जन्मरहित, अनादि और लोकों का महान ईश्वर, तत्त्व से जानता है, वह मनुष्यों में ज्ञानवान पुरुष संपूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है।'

(श्रीमद्भगवद्गीता : १०.३)

वास्तव में संतों का अवतरण-दिवस मनाने का अर्थ पटाखे फोड़कर, मिठाई बाँटकर अपनी खुशी प्रकट कर देना मात्र ही नहीं है, अपितु उनके जीवन से प्रेरणा लेकर व उनके दिव्य गुणों को ग्रहण करके अपने जीवन में भी संतत्व प्रकट करना ही सच्चे अर्थों में उनका अवतरण-दिवस मनाना है।

जन्मदिवस पर महामृत्युंजय मंत्रजप व हवन

जन्मदिवस के अवसर पर महामृत्युंजय मंत्र का जप करते हुए घी, दूध, शहद और दुर्वा घास के मिश्रण की आहुतियाँ डालते हुए हवन करना चाहिए। ऐसा करने से आपके जीवन में कितने भी दुःख, कठिनाइयाँ, मुसीबतें हों या आप ग्रहबाधा से पीड़ित हों, उन सभीका प्रभाव शांत हो जायेगा और आपके जीवन में नया उत्साह आने लगेगा।

महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

('श्रीमद्भागवत महापुराण' से)

देवर्षि नारदजी धर्मराज युधिष्ठिर से कहते हैं : युधिष्ठिर ! दैत्यराज हिरण्यकशिपु के बड़े ही विलक्षण चार पुत्र थे। उनमें प्रह्लाद यों तो सबसे छोटे थे परंतु गुणों में सबसे बड़े थे। वे बड़े संतसेवी, ब्राह्मणभक्त, सौम्यस्वभाव, सत्यप्रतिज्ञ एवं जितेन्द्रिय थे तथा समस्त प्राणियों के साथ अपने ही समान समता का बर्ताव करते और सबके एकमात्र प्रिय व सच्चे हितैषी थे। बड़े लोगों के चरणों में सेवक की तरह झुककर रहते थे। गरीबों पर पिता के समान स्नेह रखते थे। बराबरीवालों से भाई के समान प्रेम करते और गुरुजनों में भगवद्भाव रखते थे। विद्या, धन, सौंदर्य और कुलीनता से संपन्न होने पर भी घमंड और हेकड़ी उन्हें छू तक नहीं पायी थी। बड़े-बड़े दुःखों में भी वे तनिक भी घबराते न थे। लोक-परलोक के विषयों को उन्होंने देखा-सुना तो बहुत था, परंतु वे उन्हें निःसार और असत्य समझते थे। इसलिए उनके मन में किसी भी वस्तु की लालसा न थी। इन्द्रियाँ, प्राण, शरीर और मन उनके वश में थे। उनके चित्त में कभी किसी प्रकार की कामना नहीं उठती थी। जन्म से असुर होने पर भी उनमें आसुरी संपत्ति का लेश भी नहीं था। जैसे भगवान के गुण अनंत हैं, वैसे ही प्रह्लाद के श्रेष्ठ गुणों की भी कोई सीमा नहीं है। महात्मा लोग सदा से उनका वर्णन करते और उन्हें अपनाते आये हैं। वे आज भी लोगों के द्वारा ग्रहण किये जाते हैं। युधिष्ठिर ! यों देवता उनके शत्रु हैं, परंतु फिर भी भक्तों का चरित्र सुनने के लिए जब उन लोगों की सभा होती है, तब वे दूसरे भक्तों को प्रह्लाद के समान कहकर उनका सम्मान करते हैं। फिर आपके जैसे अजातशत्रु भगवद्भक्त उनका आदर करेंगे, इसमें तो संदेह ही क्या है ?

उनकी महिमा का वर्णन करने के लिए अगणित गुणों के कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं। केवल एक ही गुण - भगवान श्रीकृष्ण के चरणों में स्वाभाविक, जन्मजात प्रेम उनकी महिमा को प्रकट करने के लिए पर्याप्त है।

युधिष्ठिर ! प्रह्लाद बचपन में ही खेलकूद छोड़कर भगवान के ध्यान में जड़वत् तन्मय हो जाया करते। भगवान श्रीकृष्ण के अनुग्रहरूप ग्रह (बंधन) ने उनके हृदय को इस प्रकार खींच लिया था कि उन्हें जगत की कुछ सुध-बुध ही न रहती। उन्हें ऐसा जान पड़ता कि भगवान मुझे अपनी गोद में लेकर आलिंगन कर रहे हैं। इसलिए उन्हें सोते-बैठते, खाते-पीते, चलते-फिरते और बातचीत करते समय भी

इन बातों का ध्यान बिल्कुल न रहता। कभी-कभी भगवान मुझे छोड़कर चले गये, इस भावना में उनका हृदय इतना डूब जाता कि वे जोर-जोर से रोने लगते। कभी मन-ही-मन उन्हें अपने सामने पाकर आनंद-उद्रेक से ठहाका मारकर हँसने लगते। कभी उनके ध्यान के मधुर आनंद का अनुभव करके जोर-से गाने लगते। वे कभी उत्सुक हो बेसुरा चिल्ला पड़ते। कभी-कभी लोक-लज्जा का त्याग करके प्रेम में छककर नाचने भी लगते। कभी-कभी उनकी लीला के चिंतन में इतने तल्लीन हो जाते कि उन्हें अपनी याद ही न रहती, उन्हींका अनुकरण करने लगते। कभी भीतर-ही-भीतर भगवान का कोमल संस्पर्श अनुभव कर आनंदमग्न हो जाते और चुपचाप शांत होकर बैठे रहते। उस समय उनका रोम-रोम पुलकित हो उठता। अधखुले नेत्र अविचल प्रेम और आनंद के आँसुओं से भरे रहते। भगवान श्रीकृष्ण के चरणकमलों की यह भक्ति अकिंचन भगवत्प्रेमी महात्माओं के संग से ही प्राप्त होती है। इसके द्वारा वे स्वयं तो परमानंद में मग्न रहते ही थे, जिन बेचारों का मन कुसंग के कारण अत्यंत दीन-हीन हो रहा था, उन्हें भी बार-बार शांति प्रदान करते थे। युधिष्ठिर ! प्रह्लाद भगवान के परम प्रेमी भक्त, परम भाग्यवान और उच्चकोटि के महात्मा थे। हिरण्यकशिपु ऐसे साधु पुत्र को भी अपराधी बतलाकर उनका अनिष्ट करने की चेष्टा करने लगा।

धर्मराज युधिष्ठिर ने पूछा : नारदजी ! आपका व्रत अखंड है। अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि हिरण्यकशिपु ने पिता होकर भी ऐसे शुद्धहृदय महात्मा पुत्र से द्रोह क्यों किया ? पिता तो स्वभाव से ही अपने पुत्रों से प्रेम करते हैं। यदि पुत्र कोई उलटा काम करता है तो वे उसे शिक्षा देने के लिए ही डाँटते हैं, शत्रु की तरह वैर-विरोध तो नहीं करते।

फिर प्रह्लादजी जैसे अनुकूल, शुद्धहृदय एवं गुरुजनों के प्रति भगवद्भाव रखनेवाले पुत्रों से भला, कोई द्वेष कर ही कैसे सकता है ? नारदजी ! आप सब कुछ जानते हैं। हमें यह जानकर बड़ा कौतुहल हो रहा है कि पिता ने द्वेष के कारण पुत्र को मार डालना चाहा ! आप कृपा करके मेरा यह कौतुहल शांत कीजिये।

नारदजी कहते हैं : युधिष्ठिर ! दैत्यों ने भगवान श्री शुक्राचार्यजी को अपना पुरोहित बनाया था। उनके दो पुत्र थे : शण्ड और अमर्क। वे दोनों राजमहल के पास ही रहकर हिरण्यकशिपु के द्वारा भेजे हुए नीतिनिपुण बालक प्रह्लाद को और दूसरे पढ़ाने योग्य दैत्य-बालकों को राजनीति, अर्थनीति आदि पढ़ाया करते थे।

प्रह्लाद गुरुजी का पढ़ाया हुआ पाठ सुन लेते थे और उसे ज्यों-का-त्यों उन्हें सुना भी दिया करते थे, किंतु वे उसे मन से अच्छा नहीं समझते थे। क्योंकि उस पाठ का मूल आधार था अपने और पराये का झूठा आग्रह।

युधिष्ठिर ! एक दिन हिरण्यकशिपु ने अपने पुत्र प्रह्लाद को बड़े प्रेम से गोद में लेकर पूछा : ''बेटा ! बताओ तो सही, तुम्हें कौन-सी बात अच्छी लगती है ?''

जिन मनुष्यों की बुद्धि मोह से ग्रस्त हो रही है, उन्हींको भगवान की माया से यह झूठा दुराग्रह होता देखा गया है कि यह 'अपना' है और यह 'पराया'।

प्रह्लादजी ने कहा : ''पिताजी ! संसार के प्राणी 'मैं' और 'मेरे' के झूठे आग्रह में पड़कर सदा ही अत्यंत उद्विग्न रहते हैं। ऐसे प्राणियों के लिए मैं यही ठीक समझता हूँ कि वे अपने अधःपतन के मूल कारण, घास से ढके हुए अँधेरे कुएँ के समान इस घर को छोड़कर वन में चले जायें और भगवान श्रीहरि की शरण ग्रहण करें।''

नारदजी कहते हैं : प्रह्लादजी के मुँह से शत्रुपक्ष की प्रशंसा से भरी बात सुनकर हिरण्यकशिपु ठहाका मारकर हँस पड़ा। उसने कहा : ''दूसरों के बहकाने से बच्चों की बुद्धि यों ही बिगड़ जाया करती है। जान पड़ता है गुरुजी के घर पर विष्णु के पक्षपाती कुछ ब्राह्मण वेश बदलकर रहते हैं। बालक की भलीभाँति देख-रेख की जाय, जिससे अब इसकी बुद्धि बहकने न पाये।''

जब दैत्यों ने प्रह्लाद को गुरुजी के घर पहुँचा दिया, तब पुरोहितों ने उनको बहुत पुचकारकर और फुसलाकर बड़ी मधुर वाणी में पूछा : ''बेटा प्रह्लाद ! तुम्हारा कल्याण हो। ठीक-ठीक बतलाना। देखो, झूठ न बोलना। यह तुम्हारी बुद्धि उलटी कैसे हो गयी ? और किसी बालक की बुद्धि तो ऐसी नहीं हुई। कुलनंदन प्रह्लाद ! बताओ तो बेटा ! हम तुम्हारे गुरुजन यह जानना चाहते हैं कि तुम्हारी बुद्धि स्वयं ऐसी हो गयी या किसीने सचमुच तुमको बहका दिया है ?''

प्रह्लादजी ने कहा : ''जिन मनुष्यों की बुद्धि मोह से ग्रस्त हो रही है, उन्हींको भगवान की माया से यह झूठा दुराग्रह होता देखा गया है कि यह 'अपना' है और यह 'पराया'। उन मायापति भगवान को मैं नमस्कार करता हूँ। वे भगवान ही जब कृपा करते हैं, तब मनुष्यों की पाशविक बुद्धि नष्ट होती है। इस पशुबुद्धि के कारण ही तो 'यह मैं हूँ और यह मुझसे भिन्न है' इस प्रकार का झूठा भेदभाव पैदा होता है। वही परमात्मा यह आत्मा है। अज्ञानी लोग अपने और पराये का भेद करके उसीका वर्णन किया करते हैं। उनका न जानना भी ठीक ही है, क्योंकि उसके तत्त्व को जानना बहुत कठिन है और ब्रह्मा आदि बड़े-बड़े वेदज्ञ भी उसके विषय में मोहित हो जाते हैं। वही परमात्मा आप लोगों के शब्दों में मेरी बुद्धि 'बिगाड़' रहा है। गुरुजी ! जैसे चुंबक के पास लोहा स्वयं खिंच आता है, वैसे ही चक्रपाणि भगवान की स्वच्छंद इच्छाशक्ति से मेरा चित्त भी संसार से अलग होकर उनकी ओर बरबस खिंच जाता है।''

''उसके तत्त्व को जानना बहुत कठिन है और ब्रह्मा आदि बड़े-बड़े वेदज्ञ भी उसके विषय में मोहित हो जाते हैं। वही परमात्मा आप लोगों के शब्दों में मेरी बुद्धि 'बिगाड़' रहा है।''

नारदजी कहते हैं : परम ज्ञानी प्रह्लाद अपने गुरुजी से इतना कहकर चुप हो गये। पुरोहित बेचारे राजा के सेवक एवं पराधीन थे। वे डर गये। उन्होंने क्रोध से प्रह्लाद को झिड़क दिया और कहा : ''अरे, कोई मेरा बेंत तो लाओ। यह हमारी कीर्ति में कलंक लगा रहा है। इस दुर्बुद्धि कुलांगार को ठीक करने के लिए चौथा उपाय दंड ही उपयुक्त होगा। दैत्यवंश के चंदनवन में यह काँटेदार बबूल कहाँ से पैदा हुआ ? जो विष्णु इस वन की जड़ काटने में कुल्हाड़े का काम करते हैं, यह नादान बालक उन्हींकी बेंट (मूठ) बन रहा है, उन्हें सहायक हो रहा है।'' इस प्रकार गुरुजी ने तरह-तरह से डाँट-डपटकर प्रह्लाद को धमकाया और अर्थ, धर्म एवं कामसम्बंधी शिक्षा दी।

कुछ समय के बाद जब गुरुजी ने देखा कि प्रह्लाद ने साम, दाम, भेद और दंड से सम्बंधित सारी बातें जान ली हैं, तब वे उन्हें उनकी माँ के पास ले गये। माता ने बड़े लाड़-प्यार से उन्हें नहला-धुलाकर अच्छी तरह गहने-कपड़ों से सजा दिया। इसके बाद वे उन्हें हिरण्यकशिपु के पास ले गये। प्रह्लाद अपने पिता के चरणों में लोट गये। हिरण्यकशिपु ने उन्हें आशीर्वाद दिया और दोनों हाथों से उठाकर बहुत देर तक गले से लगाये रखा। उस समय दैत्यराज का हृदय आनंद से भर आया था। युधिष्ठिर ! हिरण्यकशिपु ने प्रसन्नमुख प्रह्लाद को अपनी गोद में बिठाकर उनका सिर सूँघा। उसके नेत्रों से प्रेम के आँसू गिर-गिरकर प्रह्लाद के शरीर को भिगोने लगे। उसने अपने पुत्र से पूछा :

''चिरंजीव बेटा प्रह्लाद ! इतने दिनों में तुमने गुरुजी से जो शिक्षा प्राप्त की है, उसमें से कोई अच्छी-सी बात हमें सुनाओ।''

प्रह्लादजी ने कहा : ''पिताजी ! विष्णु भगवान की भक्ति के नौ भेद हैं - भगवान के गुण-लीला-नाम आदि का श्रवण, उन्हींका कीर्तन, उनके रूप-नाम आदि का स्मरण, उनके चरणों की सेवा, पूजा-अर्चा, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन। यदि भगवान के प्रति समर्पण के भाव से यह नौ प्रकार की भक्ति की जाय तो मैं उसीको उत्तम अध्ययन समझता हूँ।''

प्रह्लाद की यह बात सुनते ही क्रोध के मारे हिरण्यकशिपु के होंठ फड़कने लगे। उसने गुरुपुत्र से कहा : ''रे नीच ब्राह्मण ! यह तेरी कैसी करतूत है ? दुर्बुद्धि ! तूने मेरी कुछ भी परवाह न करके इस बच्चे को कैसी निस्सार शिक्षा दे दी ? अवश्य ही तू हमारे शत्रुओं के आश्रित है। संसार में ऐसे दुष्टों की कमी नहीं है, जो मित्र का बाना धारण कर छिपे-छिपे शत्रु का काम करते हैं। परंतु उनकी कलई ठीक वैसे ही खुल जाती है, जैसे छिपकर पाप करनेवालों का पाप समय पर रोग के रूप में प्रकट होकर उनकी पोल खोल देता है।''

गुरुपुत्र ने कहा : ''इंद्रशत्रो ! आपका पुत्र जो कुछ कह रहा है, वह मेरे या और किसीके बहकाने से नहीं कह रहा है। राजन् ! यह तो इसकी जन्मजात स्वाभाविक बुद्धि है। आप क्रोध शांत कीजिये। व्यर्थ में हमें दोष न लगाइये।''

नारदजी कहते हैं : युधिष्ठिर ! जब गुरुजी ने ऐसा उत्तर दिया, तब हिरण्यकशिपु ने फिर प्रह्लाद से पूछा : ''क्यों रे ! यदि तुझे ऐसी अहित करनेवाली खोटी बुद्धि गुरुमुख से नहीं मिली तो बता, कहाँ से प्राप्त हुई ?''

(क्रमशः)

सद्गुणों की खान : भगवान श्रीराम

अपने सद्गुणों के कारण श्रीराम प्रजाजनों को प्राणों की भाँति प्रिय थे। मन और इन्द्रियों के संयम आदि सद्गुणों द्वारा वे वैसी ही शोभा पाते थे, जैसे तेजस्वी सूर्य अपनी किरणों से सुशोभित होते हैं।

भगवान श्रीरामजी के सद्गुणों का वर्णन करते हुए महर्षि वाल्मीकि कहते हैं :

धर्मज्ञः सत्यसंधश्च शीलवाननसूयकः ।
क्षान्तः सान्त्वयिता श्लक्ष्णः कृतज्ञो विजितेन्द्रियः॥
मृदुश्च स्थिरचित्तश्च सदा भव्योऽनसूयकः ।
प्रियवादी च भूतानां सत्यवादी च राघवः ॥

'श्रीराम धर्मज्ञ, सत्यप्रतिज्ञ, शीलवान, अदोषदर्शी, सहिष्णु, दीन-दुःखियों को सांत्वना प्रदान करनेवाले, मृदुभाषी, कृतज्ञ, जितेन्द्रिय, कोमल स्वभाववाले, स्थिरबुद्धि, सदा कल्याणकारी, असूयारहित, समस्त प्राणियों के प्रति प्रिय वचन बोलनेवाले और सत्यवादी हैं।'

(वा.रामायण, अयो.कां. : २.३१,३२)

भगवान श्रीराम किसीके दोष नहीं देखते थे। वे सदा शांतचित्त रहते और सांत्वनापूर्वक मीठे वचन बोलते थे। यदि उनसे कोई कठोर बात भी कह देता तो वे उसका प्रत्युत्तर नहीं देते थे। कभी कोई उन पर एक बार भी उपकार कर देता तो वे उसके उस एक ही उपकार से सदा संतुष्ट रहते और किसीके सैकड़ों अपराध करने पर भी उसके अपराधों को याद नहीं रखते थे। वे सदा चरित्र में उत्तम, ज्ञान में तथा अवस्था में बढ़े-चढ़े सत्पुरुषों के साथ ही बातचीत करते और उनसे विनय से पेश आते थे। वे अपने पास आये हुए मनुष्यों से अपनी ओर से बातचीत शुरू करते और ऐसी बातें बोलते जो उन्हें प्रिय लगें। महान बल और पराक्रम से संपन्न होने पर भी उन्हें उनका कभी गर्व नहीं होता था। दुर्वचन और झूठी बात तो उनके मुख से कभी निकलती ही नहीं थी। वे विद्वान थे और सदा वृद्ध पुरुषों का सम्मान किया करते थे। अमंगलकारी निषिद्ध कर्म में उनकी कभी प्रवृत्ति नहीं होती थी, शास्त्रविरुद्ध बातों को सुनने में उनकी रुचि नहीं थी। अपने न्याययुक्त पक्ष के समर्थन में वे बृहस्पति के समान एक से बढ़कर एक दृष्टांत देते थे। वे कल्याण की जन्मभूमि, दैन्यरहित और सरल थे। धर्म के ज्ञाता वृद्ध ब्राह्मणों के द्वारा उन्हें उत्तम शिक्षा प्राप्त हुई थी। वे बड़े बुद्धिमान, स्मरणशक्ति से संपन्न और प्रतिभाशाली थे। गुरुजनों के प्रति उनकी दृढ़ भक्ति थी। वे लोक-व्यवहार के संपादन में समर्थ और समयोचित धर्माचरण में कुशल थे।

वे विनयशील, अपने अभिप्राय को छिपानेवाले, मंत्र को गुप्त रखनेवाले और उत्तम सहायकों से संपन्न थे। वस्तुओं के त्याग और संग्रह के अवसर को वे भलीभाँति

जानते थे। वे आलस्यरहित, प्रमादशून्य तथा अपने और पराये मनुष्यों के दोषों को भली प्रकार जाननेवाले थे। वे शास्त्रों के ज्ञाता, उपकारियों के प्रति कृतज्ञ तथा दूसरे पुरुषों के मनोभावों को जानने में कुशल थे। दर्प और ईर्ष्या का उनमें अत्यंत अभाव था। किसी भी प्राणी के मन में उनके प्रति अवहेलना का भाव नहीं था। उन्हें सत्पुरुषों के संग्रह और पालन तथा दुष्ट पुरुषों के निग्रह (दंड देना, वश में रखना) के अवसरों का ठीक-ठीक ज्ञान था। आय के उपायों को वे अच्छी तरह जानते थे (अर्थात् फूलों को नष्ट न करके उनसे रस लेनेवाले भ्रमरों की भाँति वे प्रजा को कष्ट दिये बिना ही उनसे न्यायोचित धन का उपार्जन करने में कुशल थे) तथा शास्त्रवर्णित व्यय-कर्म का भी उन्हें ठीक-ठीक ज्ञान था। अपने सद्गुणों के कारण वे प्रजाजनों को प्राणों की भाँति प्रिय थे। मन और इन्द्रियों के संयम आदि सद्गुणों द्वारा श्रीराम वैसी ही शोभा पाते थे, जैसे तेजस्वी सूर्य अपनी किरणों से सुशोभित होते हैं।

जैसे पिता अपने औरस पुत्रों का कुशल-मंगल पूछता है, उसी प्रकार वे क्रमशः नगरवासियों से प्रतिदिन उनके पुत्रों, अग्निहोत्र की अग्नियों, स्त्रियों, सेवकों, शिष्यों, अनुचरों का कुशल-समाचार पूछा करते थे। पुरुषसिंह श्रीराम ब्राह्मणों से सदा पूछते रहते कि 'आपके शिष्य आप लोगों की सेवा करते हैं न ?' क्षत्रियों से यह जिज्ञासा करते कि 'आपके सेवक कवच आदि से सुसज्जित हो आपकी सेवा में तत्पर रहते हैं न ?'

किसीसे वार्तालाप करते समय वे पहले मुस्कराकर फिर वार्तालाप आरंभ करते थे। उन्होंने संपूर्ण हृदय से धर्म का आश्रय ले रखा था। निंदनीय बातों की चर्चा में उनकी कभी रुचि नहीं होती थी। उनकी इन्द्रियाँ राग आदि दोषों से दूषित नहीं होती थीं। उनका स्वभाव साधु पुरुषों के समान, हृदय उदार और बुद्धि विशाल थी। वे प्रजा को सुख देने में चंद्रमा की और क्षमारूपी गुण में पृथ्वी की समानता रखते थे। वे वृद्ध पुरुषों के सेवक तथा ब्राह्मणों (ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्मवेत्ता-ब्रह्मज्ञानी) के उपासक थे और सदा ही उनका संग किया करते थे। वे महान धनुर्धर, वेदों के यथार्थ ज्ञाता और संपूर्ण विद्याओं में भलीभाँति निष्णात थे। वे परम दयालु एवं क्रोध को जीतनेवाले थे। उनके मन में दीन-दुःखियों के प्रति बड़ी दया थी। वे बाहर-भीतर से परम पवित्र थे। उनका शरीर नीरोग था। वे अच्छे वक्ता, सुंदर शरीर से सुशोभित तथा देश-काल के तत्त्व को समझनेवाले थे। प्रजा का श्रीरामजी के प्रति और श्रीरामजी का प्रजा के प्रति बड़ा अनुराग था। वे संग्रामभूमि से विजय प्राप्त किये बिना पीछे नहीं लौटते थे। जो शास्त्र के अनुसार प्राणदंड पाने के अधिकारी होते, उनका वे नियमपूर्वक वध कर देते तथा जो शास्त्रदृष्टि से अवध्य होते, उन पर कदापि कुपित नहीं होते थे। संपूर्ण लोकों को आनंदित करनेवाले श्रीरामजी शूरता, वीरता, पराक्रम आदि के द्वारा सदा प्रजा का पालन करने में लगे रहते थे। वे सभी प्राणियों के लिए आदरणीय एवं स्थितप्रज्ञ थे।

वे दुःखों से पार हो जाते हैं

ये सर्वातिथियो नित्यं गोषु च ब्राह्मणेषु च।
नित्यं सत्ये चाभरिता दुर्गाण्यति तरन्ति ते ॥

'जो सदैव अतिथि, गौ और ब्राह्मणों का पूजन करनेवाले हैं, सत्य के प्रेमी हैं, वे समस्त दुःखों से पार हो जाते हैं।'

नित्यं शमपराये च तथा ये चानसूयकाः।
नित्यं स्वाध्यायिनो ये च दुर्गाण्यति तरन्ति ते ॥

'जो मनुष्य सदैव शांतचित्त हैं, दूसरे के गुणों में दोष नहीं लगाते हैं, जो स्वाध्यायशील (अपने धर्मग्रंथों का अध्ययन करनेवाले) हैं, वे समस्त दुःखों से पार हो जाते हैं।'

सर्वान् देवान् नमस्यन्ति ये चैकं वेदमाश्रिताः।
श्रद्दधानाश्च दान्ताश्च दुर्गाण्यति तरन्ति ते ॥

'जो वेद-शास्त्रों में निष्ठा रखनेवाले, सब देवताओं को नमस्कार करनेवाले, श्रद्धावान और जितेन्द्रिय हैं, वे समस्त दुःखों से पार हो जाते हैं।'

तथैव विप्रप्रवरान् नमस्कृत्य यतव्रताः।
भवन्ति ये दानरताः दुर्गाण्यति तरन्ति ते ॥

'जो अपने धर्म-कर्म में सावधान उत्तम ब्राह्मणों को नमस्कार करके यथाशक्ति दान देते हैं, वे समस्त दुःखों से पार हो जाते हैं।'

तपस्विनश्च ये नित्यं कौमार ब्रह्मचारिणः।
तपसा भावितात्मानो दुर्गाण्यति तरन्ति ते ॥

'जो बाल्यावस्था से ब्रह्मचारी, तपस्वी और तप से पवित्र अंतःकरणवाले हैं, वे समस्त दुःखों से पार हो जाते हैं।'

देवातातिथिभृत्यानां पितृणां चार्चने रताः।
शिष्टान् भोजिनो ये च दुर्गाण्यति तरन्ति ते ॥

'जो पुरुष देवता, अतिथि, भृत्य, नौकरों, पिता आदि का यथायोग्य सत्कार करते हैं तथा बलिवैश्वदेव करके भोजन करते हैं, वे समस्त दुःखों से पार हो जाते हैं।'

उपरोक्त शुभ कर्मों में से किसी भी कर्म को करने से मनुष्य दुःख की निवृत्ति कर सकता है।

भगवान शंकर माता पार्वती से कहते हैं :

हनूमान सम नहिं बड़भागी।
नहिं कोउ राम चरन अनुरागी ॥
गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई।
बार बार प्रभु निज मुख गाई ॥

'हे गिरिजे ! हनुमानजी के समान न तो कोई सौभाग्यशाली है और न कोई भगवान श्रीरामजी के चरणों का प्रेमी ही है, जिनके प्रेम और सेवा की (स्वयं) प्रभु ने अपने श्रीमुख से बार-बार बड़ाई की है।'

(श्रीरामचरित. उ.कां. : ४९.४,५)

श्री हनुमानजी को ज्ञानियों में श्रेष्ठ और वीरों में अद्वितीय शक्तिशाली कहा जाता है । उनका जीवन पुरुषार्थ, साहस, संयम, सदाचार, भक्ति और निष्काम सेवा की प्रेरणा देता है।

राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम।

(श्रीरामचरित. सुं.कां. : १)

हनुमानजी जाग्रत देव, सात चिरंजीवियों में से एक, बाल ब्रह्मचारी, अतिशय बलवान, महान वीर, सर्वथा निर्भय, सत्यवादी, स्वामिभक्त, महाविरक्त, सिद्ध, परम प्रेमी भक्त, युद्ध-विद्या में बड़े ही निपुण, अष्टसिद्धि व नवनिधि के दाता तथा विद्या, बुद्धि, ज्ञान और पराक्रम की मूर्ति हैं।

श्रीराम-कार्य में कितने भी विघ्न-बाधाएँ या प्रलोभन आयें, उन सब पर विजय प्राप्त करते हुए हनुमानजी निरंतर आगे ही बढ़ते रहे । इतने सद्गुण होने पर भी अभिमान तो उन्हें छू तक नहीं पाया।

जब हनुमानजी माता सीता का पता लगाकर व अकेले लंका को जलाकर रावण का मानमर्दन करके भगवान श्रीरामजी के पास वापस आये, तब भगवान ने पूछा : ''हनुमान ! त्रिभुवनविजयी रावण की लंका को तुमने कैसे जला दिया ?''

हनुमानजी ने उत्तर में कहा :

सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथ न कछू मोरि प्रभुताई ॥

'यह सब तो हे श्रीरघुनाथजी ! आप ही का प्रताप है। हे नाथ ! इसमें मेरी प्रभुता (बड़ाई) कुछ भी नहीं है।'

(श्रीरामचरित. सुं.कां. : ३२.५)

कैसी अनन्य निष्ठा और अतुलनीय भक्ति है पवनसुत हनुमानजी की !

हनुमानजी भगवान शंकर के अंशावतार (ग्यारहवें रुद्र) माने जाते हैं । यह बात निम्न प्रसंग से भी उजागर होती है।

एक बार माता सीता ने हनुमानजी को भोजन के लिए निमंत्रित किया और अपने हाथों से अनेक प्रकार के व्यंजन बनाये । हनुमानजी ने भोजन शुरू किया । सीता माता के हाथों से बना व परोसा गया वह अमृततुल्य भोजन वे आनंदपूर्वक ग्रहण करते ही जा रहे थे । उन्होंने कितना भोजन कर लिया इसका उन्हें ध्यान ही नहीं रहा । हनुमानजी को इस तरह भोजन करते देखकर माता सीता आश्चर्यचकित हो गयीं । उनके बनाये हुए समस्त व्यंजन भी समाप्त होते जा रहे थे । तब उन्होंने ध्यान लगाकर देखा कि हनुमानजी के वेश में स्वयं भगवान शंकर भोजन ग्रहण कर रहे हैं । फिर माता सीता ने **'ॐ नमः शिवाय'** मंत्र का उच्चारण करते हुए हनुमानजी को भोजन अर्पित किया और मन-ही-मन रुद्रदेव का स्मरण करते हुए उनसे तृप्त हो जाने की भी प्रार्थना की । माता के इस प्रकार प्रार्थना करने से रुद्रावतार हनुमानजी तृप्त हो गये।

हनुमानजी की श्रीराम-प्रीति

(संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से)

जब दंड दिया भगवान श्रीराम ने...

कृत्तिवास रामायण में एक कथा आती है कि समुद्र-पार जाने हेतु रामेश्वर में भगवान श्रीरामजी की वानर-सेना सेतु बाँधने के कार्य में लगी थी और हनुमानजी उसका नेतृत्व कर रहे थे।

एक गिलहरी ने सोचा कि 'सब रामकाज में लगे हैं तो मैं भी लग जाऊँ।' वह समुद्र में गोते लगाती और आकर बालू में लोटती। जब उसके शरीर में खूब बालू लग जाती, तब पुल पर जाकर उसे झाड़ देती और चली आती।

उसके आने-जाने से बंदरों को तकलीफ होती थी। उन्होंने हनुमानजी से उसकी शिकायत की कि ''यह छोटी-सी गिलहरी बार-बार हमारे रास्ते में आती है। जब हम बड़े-बड़े पत्थर लेकर जाते हैं तो इसको बचाने में हमारे काम में ढील आ जाती है। इसको मना करते हैं तो यह मानती भी नहीं है।''

बंदरों की शिकायत सुनकर हनुमानजी ने गिलहरी की पूँछ पर अपने पैर का अँगूठा जरा-सा दबाया और कहा कि ''तुम सेवा नहीं करोगी! तुम्हारी जरा-सी सेवा से बंदरों को विघ्न होता है।'' पूँछ दबायी जाने से गिलहरी चीख उठी तथा हनुमानजी की शिकायत करने भगवान श्रीरामजी के पास भागी। वह श्रीरामजी से बोली : ''प्रभु! मैं सेतु के निर्माण में मेरी ओर से जितनी हो सके उतनी सेवा कर रही थी और प्रत्येक जीव अपनी योग्यता के अनुसार ही तो प्रभु की सेवा कर सकता है।''

भगवान श्रीरामजी बोले : ''हाँ-हाँ, तुम सेवा करो। यह तन सेवा करके ईश्वर-प्राप्ति की ओर आगे बढ़ने के लिए ही है।''

''किंतु हनुमानजी मुझे सेवा नहीं करने देते और मेरी पूँछ को उन्होंने अपने पैर के अँगूठे से दबाया। पूँछ दबायी जाने पर प्राणियों को कितनी पीड़ा होती है, प्रभु!''

गिलहरी अपना दुखड़ा रोने लगी। श्रीरामजी ने कहा : ''अच्छा, अब तू ही बता कि हनुमान को क्या दंड दूँ?''

''प्रभु! आप हनुमानजी को बुलाइये और उनकी पूँछ को अपने चरण से ऐसा दबाइये कि वे भी चें-चें करके कूदें और उन्हें पता चले कि पूँछ दबायी जाने पर कितना दर्द होता है।''

''ठीक है, ऐसा ही किया जायेगा। तुम्हें पूरा न्याय मिलेगा।''

हनुमानजी को बुलाया गया। हनुमानजी 'जय श्रीराम' करके श्रीरामजी के पास पहुँचे। श्रीरामजी ने पूछा : ''इस गिलहरी को सेवा करने से तुमने रोका था?''

''जी, प्रभु!''

''इसकी पूँछ तुमने दबायी थी?''

''हाँ, प्रभु!''

''बैठ जाओ, तुम्हें दंड दिया जायेगा।''

हनुमानजी ने कोई सफाई नहीं दी और बैठ गये। श्रीरामजी ने पूरा बल लगाकर अपने दायें चरण से

श्रीरामजी ने हनुमानजी की पूँछ दबायी। पहले क्षण तो उन्हें पीड़ा हुई किंतु 'चरण श्रीरामजी के हैं' - ऐसा सोचकर हनुमानजी गद्‌गद हो गये और उनकी भावसमाधि लग गयी।

हनुमानजी की पूँछ दबायी । पहले क्षण तो पीड़ा हुई किंतु 'चरण श्रीरामजी के हैं' - ऐसा सोचकर हनुमानजी गद्‌गद हो गये और उनकी भावसमाधि लग गयी।

जब वे समाधि से उठे तो पुनः गिलहरी के पास गये और बोले : ''मैं तेरे आगे हाथ जोड़ता हूँ, मैं फिर से तेरी पूँछ दबाता हूँ, तू मुझे फिर से प्रभुचरणों के स्पर्श का जरा स्वाद दिला दे।''

कैसी प्रभुप्रीति है नम्रता की मूर्ति, सत्यनिष्ठ, जितेन्द्रिय, मातृभक्त और भगवान श्रीरामजी के स्नेहपात्र हनुमानजी की!

श्रीरामजी की दीर्घायु के लिए...

भगवान श्रीरामचंद्रजी के अनन्य भक्त हनुमानजी ने एक मंगलवार को प्रातःकाल माँ जानकी के समीप जाकर कहा : ''माँ ! मुझे भूख लगी है, कुछ खाने को दीजिये।''

माँ सीता ने कहा : ''बेटा ! मैं अभी स्नान करने जा रही हूँ। स्नान करके फिर तुम्हें मोदक देती हूँ।''

माता के वचन सुनकर हनुमानजी प्रभु श्रीराम का नाम जपते हुए माता के स्नान कर लेने की प्रतीक्षा करने लगे। स्नान के बाद माता सीता ने माँग में सिंदूर भरा। माता की माँग में सिंदूर देख हनुमानजी ने पूछा : ''माँ! आपने यह सिंदूर क्यों लगाया है ?''

माता जानकी ने उत्तर दिया : ''इसे लगाने से स्वामी की आयु-वृद्धि होती है।''

'सिंदूर लगाने से स्वामी की आयु-वृद्धि होती है।' - यह जानकर हनुमानजी उठे और अपने सर्वांग में तेल एवं सिंदूर पोत दिया और राजसभा में पहुँच गये। उन्हें इस स्थिति में देखकर पूरी सभा जोरों-से हँस पड़ी। भगवान श्रीरामजी ने मुस्कराते हुए पूछा : ''हनुमान ! आज तुमने सर्वांग में सिंदूर का लेप क्यों कर लिया है ?''

सरल स्वभाव हनुमानजी ने हाथ जोड़कर विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया : ''प्रभु ! माता सीताजी द्वारा तनिक-सा सिंदूर माँग में भरने से आपकी आयु में वृद्धि होती है, यह जानकर आपकी आयु में अत्यधिक वृद्धि के लिए मैंने पूरे शरीर पर सिंदूर लगाया है।''

भगवान श्रीराम हनुमानजी के सरल स्वभाव एवं निर्दोष प्रेम पर मुग्ध हो गये और उन्होंने घोषणा कर दी : ''आज मंगलवार है। इस दिन मेरे अनन्य प्रीतिभाजन महावीर हनुमान को जो तेल एवं सिंदूर चढ़ायेंगे, उन्हें मेरी प्रसन्नता प्राप्त होगी और उनकी समस्त कामनाओं की पूर्ति हो जायेगी।''

ऐश्वर्य-आरोग्यप्रद सूर्य मंत्र

ॐ ह्रीं घृणिः सूर्य आदित्यः क्लीं ॐ।

सुख-सौभाग्य की वृद्धि के लिए, दुःख-दारिद्रय को दूर करने के लिए, रोग व दोष के शमन के लिए इस प्रभावकारी मंत्र की साधना रविवार के दिन से करनी चाहिए। रविवार के दिन खुले आकाश के नीचे पूर्व की ओर मुँह करके शुद्ध ऊन के आसन या कुशासन पर बैठकर काले तिल, जौ, गूगल, कपूर और घी मिला हुआ शाकल तैयार करके आम की लकड़ियों से अग्नि को प्रदीप्त कर उक्त मंत्र से १०८ आहुतियाँ दें। तत्पश्चात् सिद्धासन लगाकर इसी मंत्र का १०० बार जप करें। जप करते समय दोनों भौंहों के मध्य भाग में भगवान सूर्य का ध्यान करते रहें। इस तरह ११ दिन तक करने से यह मंत्र सिद्ध हो जाता है। इस साधना में रविवार का व्रत अनिवार्य है।

इसके बाद प्रतिदिन स्नान के बाद ताम्र-पात्र में जल भरकर इसी मंत्र से सूर्य को अर्घ्य दें। जमीन पर जल न गिरे इसलिए नीचे दूसरा ताम्र-पात्र रखें। तत्पश्चात् इस मंत्र का १०८ बार जप करें।

मात्र इतना करने से आयुष्य, आरोग्य, ऐश्वर्य, संपत्ति और कीर्ति की उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।

संत की चरणरज

(संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से)

विक्रम संवत् १७८१ की घटित घटना है :

तीर्थराज प्रयाग में कुंभ मेला लगा था। माघ मास की अमावस्या थी, कुंभ-स्नान का पर्व था। वहाँ पर विदर्भ देश का सामंत विजयपाल राष्ट्रकूट भी आया हुआ था।

गंगा, यमुना और सरस्वती के संगमस्थान त्रिवेणी घाट पर लोगों ने देखा कि जल की तेज धारा में बहता हुआ एक अनोखा कमल-सा कोई पदार्थ ठीक घाट के सामने आकर रुक गया है। उसके नीचे से पानी बहता जा रहा है। सामंत विजयपाल राष्ट्रकूट भी इस आश्चर्य को एकटक देख रहा था। उसने नौका मँगवायी और उसमें बैठकर उस कमल-से पदार्थ की तरफ बढ़ा। वहाँ जाकर क्या देखता है कि वह कमल-सी वस्तु एक नन्ही-सी अति सुंदर गौरीरूपा कन्या है। वही पानी पर रुकी है और उसके नीचे से पानी तीव्र गति से बहता जा रहा है। राष्ट्रकूट ने बड़े आदर से उस कन्या को नौका में बिठाया और अपने शिविर में ले आया।

यदि आप महापुरुषों के आभामंडल में आते हो तो आपमें उच्च विचारों का प्रवाह शुरू हो जाता है और संस्कारहीन लोगों के आभामंडल में जाते हो तो आपमें तुच्छ विचारों का प्रवाह शुरू हो जाता है।

उसके कोई संतान नहीं थी। उसने वह तेजस्विनी कन्या अपनी पत्नी को सौंप दी। पत्नी के आनंद का कोई पार न रहा ! किंतु वह कन्या न कुछ खाती-पीती थी, न ही कुछ बोलती थी।

कन्या ने हाथ के इशारे से कुछ संकेत किया कि 'मुझे वहाँ ले चलो।' ईश्वरीय प्रेरणा से उसका संकेत समझकर राष्ट्रकूट उसे श्रृंगेरी मठाधीश शंकराचार्य स्वामी सोमनाथाचार्यजी के पास ले गया। वहाँ पहुँचकर उस कन्या ने पहली बार अपनी मधुमयी देववाणी में सोमनाथाचार्यजी से कहा : ''किसी सद्वैष्णव को बुलाइये।''

सोमनाथाचार्यजी ने कहा : ''मैं भी तो सद्वैष्णव हूँ।''

कन्या : ''आप सद्वैष्णव हो रहे हैं।''

वैष्णवों को बुलाया गया। वैष्णव संप्रदाय के तिलकधारी और थोड़ा पूजा-पाठ करनेवाले अनेकों साधु वहाँ आ गये। अब प्रश्न उठा कि 'इनमें से पहुँचे हुए सद्वैष्णव को कैसे खोजा जाय ?'

तब कन्या ने एक कटोरा तथा शालग्राम माँगा। कन्या के कहने पर एक चाँदी के कटोरे को गंगाजल से भरा गया और उसमें शालग्राम भगवान को छोड़ दिया गया। कन्या ने सद्वैष्णव की पहचान बताते हुए कहा : ''यदि कोई सद्वैष्णव इस कटोरे में निहारेगा तो शालग्राम भगवान कटोरे का तला छोड़कर जल के ऊपर पधारेंगे।''

एक के बाद एक करके सभी वैष्णवों ने उस कटोरे में निहारा किंतु शालग्रामजी तला छोड़कर ऊपर न आये। आखिर में सोमनाथाचार्यजी ने कटोरे में निहारा तो शालग्रामजी ने तला तो छोड़ा, किंतु थोड़े-से ही ऊपर आये। तब सोमनाथाचार्यजी ने अपने कुछ विवेकी शिष्यों को सद्वैष्णव की खोज के लिए भेजा।

खोजते-खोजते उन्हें एक जगह गूदड़बाबा मिले। लोगों को उन बाबा के असली नाम का पता ही न था। वे गूदड़ ओढ़ते थे, इसलिए उनका नाम पड़ गया गूदड़बाबा। सोमनाथाचार्यजी के भेजे हुए शिष्यों ने सारा वृत्तांत सुनाते हुए उनसे प्रार्थना की : ''बाबा ! अब आप चलिये।''

गूदड़बाबा : ''मुझे ले जाकर क्या करोगे ? तुम्हारे स्वामीजी ने सद्वैष्णव को बुलाया है। हम वैष्णव ही नहीं हैं तो सद्वैष्णव कहाँ से हो सकते हैं ? तुम लोगों को अच्छा मौका मिल गया है हमारा मखौल उड़ाने का।''

''नहीं, बाबा ! महापुरुषों का मजाक उड़ाना, उनमें
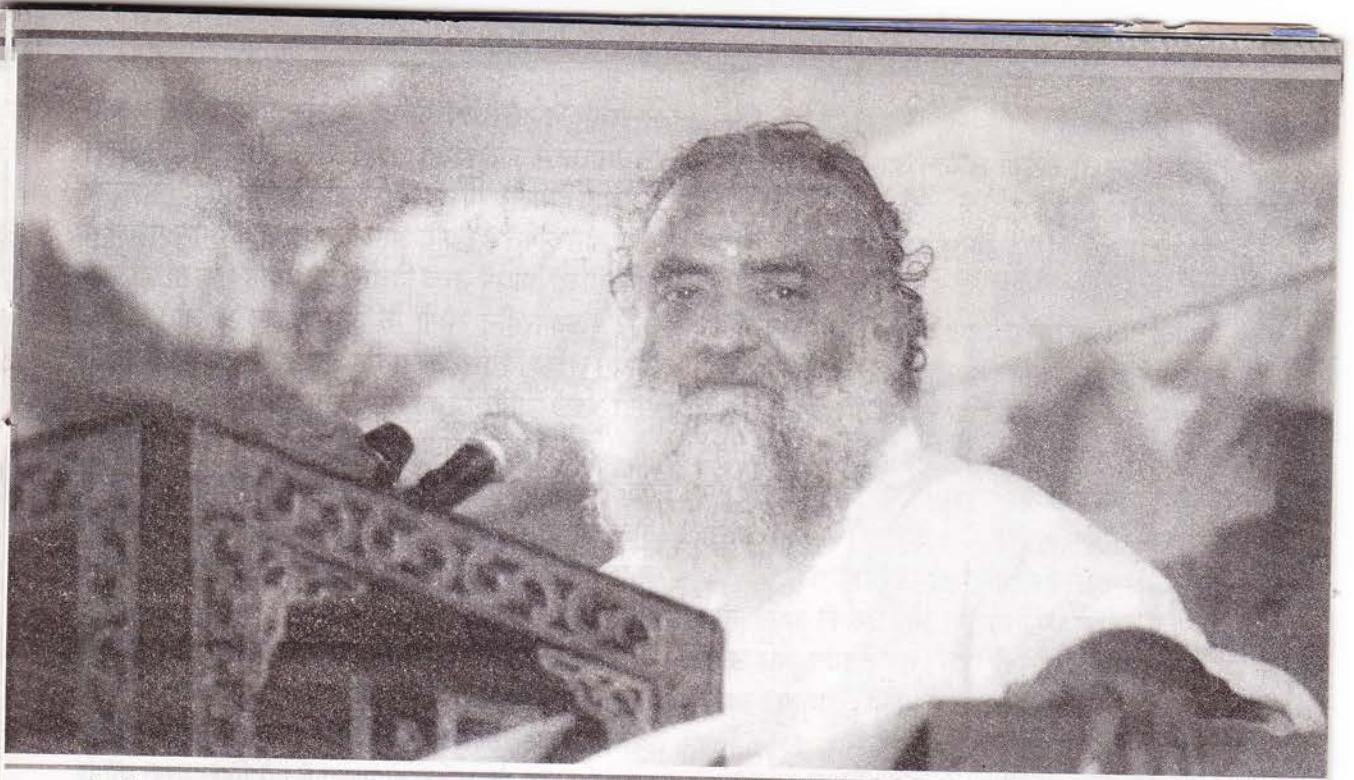
दोष देखना अपराध है। जितने वैष्णव हमारे यहाँ आये थे, उनमें से कोई भी सद्वैष्णव साबित नहीं हुआ । इससे आचार्य ने आप जैसे छिपे हुए वास्तविक वैष्णव-महात्माओं की खोज में हमें भेजा है। अब आप हमारे साथ चलने की कृपा कीजिये।''

तात्त्विक दृष्टि से महापुरुषों को पहचानना बड़ा कठिन होता है। सोमनाथाचार्यजी के शिष्यों ने गूदड़बाबा की महानता को पहचान लिया और नम्रतापूर्वक प्रार्थना करके साथ में आने के लिए मना लिया। जब वे गूदड़बाबा को साथ लेकर सोमनाथाचार्यजी के पास पहुँचे तो उन्होंने उठकर गूदड़बाबा का सत्कार किया। दूसरे साधु बोले :

''यह भी अच्छा मजाक रहा। इतने सारे वैष्णव बैठे हैं और गूदड़बाबा को लेने के लिए मठाधीश सोमनाथाचार्यजी स्वयं उठकर जा रहे हैं ! ये गूदड़बाबा क्या कर सकेंगे ? हम इतने सारे वैष्णवों के कटोरे में निहारने पर भी शालग्रामजी ऊपर न पधारे तो गूदड़बाबा क्या करेंगे ? देखो, भाई ! रामजी की लीला !''

कोई कुछ, कोई कुछ कहने लगा । आपस में कानाफूसी होने लगी । गूदड़बाबा आये और आँखें बंद करके खड़े हो गये । सोमनाथाचार्यजी ने गूदड़बाबा से प्रार्थना की : ''बाबा ! आप कटोरे में निहारें।''

गूदड़बाबा ने आँखें खोलीं व शालग्राम की तरफ नजर डाली। शालग्राम भगवान जल के ऊपर आ गये !

लोग पुकार उठे : ''शालग्राम भगवान की जय ! गूदड़बाबा की जय !''

शालग्रामजी को ऊपर आया देख कन्या ने कहा : ''बाबा ! मुझे आपकी चरणरज लेने दीजिये।''

''यह क्या कहती हो ? राम-राम, सीताराम ! हम नहीं देते।''

तब रहस्य खोलते हुए कन्या ने कहा : ''बाबा ! मैं वैष्णवी देवी हूँ। कुंभ के अवसर पर मैं स्नान करने के लिए धरती पर आयी थी । पर्व के स्नान का महत्त्व तो है किंतु कलियुग में रजो-तमोगुण बढ़ जाने से, आम महिलाओं के संग और उनके हलके श्वासोच्छ्वास के संपर्क से तथा स्पर्शदोष से मेरी अपने लोक में जाने की शक्ति कुंठित हो गयी है । मैंने यह लीला इसीलिए रची है कि मुझे किन्हीं पुण्यपुंज महापुरुष की चरणरज मिल जाय और उसे पाकर मेरी अपने लोक में जाने की शक्ति जागृत हो जाय। बाबा ! मेरी दीन दशा पर दया करके आप अपनी चरणरज देने की कृपा कीजिये।''

''हम अपनी चरणरज काहे को देंगे ? हमको ले चलोगी अपने लोक में ?''

वैष्णवी देवी गूदड़बाबा की चरणरज चाहती थी। देवी का दैवी स्वभाव कितना निरभिमानी है और गूदड़बाबा का

बाबापना कितना निर्दोष है !

''बाबा ! ले तो चलूँगी लेकिन आपको अपना गूदड़ और लकुटी छोड़ने पड़ेंगे।''

''गूदड़ तो हम नहीं छोड़ेंगे और अपनी लकुटी भी नहीं छोड़ेंगे।''

वैष्णवी देवी को तो चरणरज चाहिए थी। उसने कहा : ''बाबा ! ठीक है, गूदड़सहित ही आपको ले चलूँगी।''

बाबा ने चरणरज लेने की सहमति दे दी।

कोई संत चरणरज लेने की सहमति दें और उनमें संतत्व हो तो चरणरज अपना काम करती है, नहीं तो 'मेरे को चरणरज चाहिए... चरणरज चाहिए।'- ऐसा करके धक्का-मुक्की करते हैं तो कोई लाभ नहीं होता।

वैष्णवी देवी ने चरणरज ली और उसकी अपने लोक में जाने की शक्ति जागृत हो गयी। वह उड़कर कुछ ऊपर आसमान में खड़ी रही और बाबा से बोली : ''बाबा ! अपनी यह लकुटी हमें पकड़ा दीजिये।''

बाबा ने अपनी लकुटी का एक सिरा उसे पकड़ाया। लोगों के देखते-देखते वैष्णवी देवी बाबासहित अपने दिव्य लोक में चली गयी !

इस घटना से संकेत मिलता है कि स्पर्शदोष, संगदोष से सत्त्वगुण और सात्त्विकता के संस्कार दबते हैं। आप सिनेमाघर में जाते हो तो आपके संस्कार हलके होने लगते हैं। आप देवालय या आश्रम में जाते हो तो आपके संस्कार ऊँचे होने लगते हैं। यदि आप महापुरुषों के आभामंडल में आते हो तो आपमें उच्च विचारों का प्रवाह शुरू हो जाता है और संस्कारहीन लोगों के आभामंडल में जाते हो तो आपमें तुच्छ विचारों का प्रवाह शुरू हो जाता है। इसलिए सदा अच्छे व्यक्तियों का संग करना चाहिए।

जब तक आत्मज्ञान नहीं होता तब तक शक्तियाँ कुंठित होने का प्रसंग आ सकता है। आत्मज्ञान हो जाय तो फिर जीवन में कोई उतार-चढ़ाव नहीं आता। फिर तो मनुष्य उस परम पद को पा लेता है, जिसको पाने के बाद गिरना नहीं पड़ता।

जो उस परम पद को, ब्रह्मज्ञान को पा लेते हैं उन्हें किसी तीर्थ में जाकर, पर्व पर नहाकर पुण्यलाभ पाने की आवश्यकता नहीं रहती। वे जिस जल को छू लेते हैं, वह जल गंगाजल के समान हो जाता है। वे जिस वस्तु को छू लेते हैं, वह वस्तु प्रसाद हो जाती है। वे जो बोलते हैं, वह मंत्र हो जाता है। ऐसी महिमा है ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों की !

स्पर्शदोष से बचें...
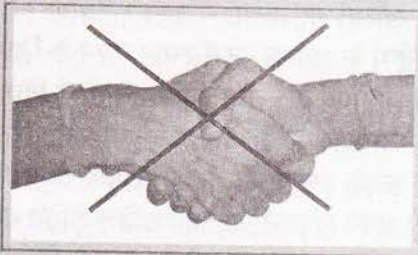
आजकल जो हाथ मिलाने का रिवाज प्रचलित हो रहा है, वह बड़ा हानिकारक है। प्रत्येक मानव के शरीर में अनेक जीवाणु होते हैं। हाथों में जीवाणु होने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। गर्मी के कारण शरीर से पसीना आना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। इस कारण हाथ मिलाने से रोगाणुओं का और उनके माध्यम से संक्रामक बीमारियों का आदान-प्रदान होता है।

भारतीय अध्यात्म-विज्ञान के अनुसार, हाथ मिलाने से अपने शरीर की संचित दिव्य शक्ति दूसरे व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करती है।

जब देवता शक्तिपात करते हैं तो उनकी शक्ति अधिकतर हाथों से ही निकलती है। अतः हाथ मिलाने से आपकी शक्ति का ह्रास संभव है। यदि आप अधिक-से-अधिक व्यक्तियों से हाथ मिलाते हैं तो थकान भी महसूस कर सकते हैं।

हाथ जोड़कर नमस्कार करने से जितनी मर्यादा रहती है, उतनी हाथ मिलाने से नहीं रहती। अतः सदैव इस भारतीय शिष्ट परंपरा के अनुसार हाथ जोड़कर नमस्कार करना हितकारी है। हाथ मिलाना हानिकारक है।

सात्त्विकता और स्वास्थ्य चाहनेवाले हाथ मिलाने की आदत से बचें।

'श्री योगवासिष्ठ' का परिचय

(संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से)

कलियुग के बेचारे मानव में शारीरिक क्षमताएँ नहीं हैं, मानसिक सच्चाइयाँ नहीं हैं, बौद्धिक ऊँचाइयाँ नहीं हैं फिर भी 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' जैसा ऊँचा ग्रंथ उसे पढ़ने-सुनने को मिल रहा है, यह उसका कितना सौभाग्य है ! आज त्रेतायुग (जिस युग में वसिष्ठजी द्वारा भगवान श्रीरामजी को यह उपदेश दिया गया था) जैसा शरीर नहीं है, त्रेतायुग जैसी सामाजिक व्यवस्था नहीं है तथा वैसी मानसिक पवित्रता और सच्चाई भी नहीं है। लेकिन त्रेतायुग और सतयुग में सत्संग के विचार द्वारा श्रीरामजी जैसों को, श्रीरामजी के गुरुओं को, तत्कालीन लोगों को जो सत्यस्वरूप परमात्मा का ज्ञान, परमात्म-शांति और परमात्म-पद की प्राप्ति होती थी, वही परमात्म-ज्ञान, परमात्म-शांति और परमात्म-पद इस युग में भी हम पा सकते हैं। अपितु उन युगों की अपेक्षा इस युग में और सरलता से पा सकते हैं। कलियुग में मनुष्य शरीर से, मन से तथा बुद्धि से भी गरीब हो गया है। वह ज्यादा समय मन को एकाग्र और मौन नहीं रख सकता। परमात्मा ने कलियुग में ऐसी व्यवस्था की है कि मनुष्य थोड़ा-सा साधन करे तो भी उसे बहुत उपलब्धियों की प्राप्ति हो जाय। परमात्मा से मुलाकात करने हेतु मेरे गुरुदेव के गुरुदेव ने जितना परिश्रम किया, जितनी तपस्या की, उससे कम परिश्रम में मेरे गुरुदेव को परमात्मा की प्राप्ति हुई। मेरे गुरुदेव को जो तप-तितिक्षा सहनी पड़ी, उसका हजारवाँ हिस्सा भी मुझे परमात्म-प्रसाद पाने हेतु सहन नहीं करना पड़ा। फिर भी मुझे जो सहन करना पड़ा, उतना मेरे साधकों को नहीं करना पड़ रहा है और सहज में ही उन्हें साधना का मार्ग मिल रहा है।

भगवान श्रीरामजी का विवेक मात्र १६ वर्ष की उम्र में जग गया और वे विवेक-विचार में खोये रहने लगे। उन्हीं दिनों यज्ञों का ध्वंस करनेवाले मारीच आदि राक्षस महर्षि विश्वामित्रजी के भी यज्ञ में विघ्न डालकर उन्हें तंग कर रहे थे। विश्वामित्रजी ने सोचा कि 'राजा दशरथ धर्मात्मा हैं। मैं उनसे मदद लूँ।' वे अयोध्या गये। राजा दशरथ को जैसे ही खबर मिली कि विश्वामित्रजी आये हैं, वे सिंहासन से तुरंत उठ खड़े हुए और स्वयं उनके पास जाकर उनके चरणों में दंडवत् प्रणाम किया। राजा दशरथ इतना आदर करते थे आत्मज्ञानी महापुरुषों का !

'श्री योगवासिष्ठ' एक ऐसा ग्रंथ है जिसे पढ़कर कोई भी व्यक्ति इस मनुष्यलोक में आत्मज्ञान पाये बिना नहीं रह सकता।

दशरथजी ने विश्वामित्रजी को तिलक किया, उनकी आरती उतारी, फिर पूछा : ''मुनिशार्दूल ! मैं आपकी क्या सेवा करूँ ?''

विश्वामित्रजी बोले : ''जो मैं माँगूँगा वह दोगे ?''

''महाराज ! मैं और मेरा राज्य आपके चरणों में अर्पित है।''

''यह नहीं चाहिए। आपके सुपुत्र श्रीराम और लक्ष्मण मुझे दे दो।''

यह सुनकर राजा दशरथ मूर्च्छित हो गये, फिर होश में आने पर बोले : ''महाराज ! यह मत माँगो, कुछ और माँग लो।''

विश्वामित्रजी क्रोधित होकर बोले : ''अच्छा, खाली घर से साधु खाली ही जाता है। अभागा आदमी क्या जाने साधु की सेवा ? कौन अभागा मनुष्य साधु के दैवी कार्य में सहभागी हो सकता है ? हम यह चले।''

दशरथजी घबराये कि संत रूठकर, नाराज होकर चले जायें, यह

ठीक नहीं है। वसिष्ठजी ने भी दशरथजी को समझाया कि ''विश्वामित्रजी के पास वज्र जैसा तपोबल है । ये स्वयं समर्थ हैं राक्षसों को शाप देने में, लेकिन संत लोहे से लोहा काटना चाहते हैं, सोने से नहीं । विश्वामित्रजी आपके राजकुमारों द्वारा ताड़का आदि का वध करायेंगे और उन्हें प्रसिद्ध करेंगे। इसलिए राम-लक्ष्मण को विश्वामित्रजी को अर्पण करने में ही आपकी शोभा है।''

राजा दशरथ ने कहा : ''श्रीराम तो विवेक करके संसार से उपराम हो गये हैं।''

वसिष्ठजी ने कहा : ''साधो-साधो ! जब श्रीरामजी का विवेक जगा है तो हम उन्हें ज्ञानी बनाकर भेज देंगे, कर्मबंधन से पार करके भेज देंगे। वे ब्रह्मज्ञानी होकर राज्य करें।''

भगवान श्रीरामजी को आदर के साथ राजसभा में लाया गया और वहाँ उन्होंने अपने हृदय के विचार प्रकट किये । इन्हीं विचारों का वर्णन 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' के पहले प्रकरण **'वैराग्य प्रकरण'** में किया गया है। फिर वसिष्ठजी और विश्वामित्रजी ने श्रीरामजी के वैराग्य की सराहना की और जैसे बीज बोकर सिंचाई की जाती है, वैसे उनको उपदेश देकर उनमें संस्कार सींचे। इन उपदेशों का वर्णन दूसरे प्रकरण **'मुमुक्षु व्यवहार प्रकरण'** में किया गया है। फिर 'सृष्टि का मूल क्या है और जगत की उत्पत्ति कैसे हुई ?'- इसका उपदेश दिया गया, जिसका वर्णन तीसरे प्रकरण **'उत्पत्ति प्रकरण'** में किया गया है । फिर अनात्मा से उपराम होकर आत्मा में स्थिति करने का उपदेश दिया गया, जिसका वर्णन चौथे प्रकरण **'स्थिति प्रकरण'** में किया गया है । फिर उपदेश का सिलसिला बढ़ता गया और सुख-दुःख में समता का अभ्यास करने और परमात्मा में विश्रांति पाने का उपदेश दिया गया, जिसका वर्णन पाँचवें प्रकरण **'उपशम प्रकरण'** में किया गया है। जैसे तेल खत्म हो जाने पर दीया बुझ जाता है, निर्वाण हो जाता है, वैसे ही मन को हमारी सत्ता न मिलने से उसकी दौड़, भटकान खत्म हो जाती है अर्थात् मन का निर्वाण हो जाता है। इसीका उपदेश आखिरी छठे प्रकरण **'निर्वाण प्रकरण'** में दिया गया है।

जो दुःखमय संसार की चोटों से बचकर परम सुख, परम शीतलता का अनुभव करना और अपना कर्तव्य निर्लेप भाव से निभाना चाहते हैं, उन सभीके लिए 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' विचारने योग्य है।

स्वामी रामतीर्थ ने इसका बार-बार अध्ययन किया और वे इसके ज्ञान में, आत्मानुभव में इतने मस्त हुए कि उन्होंने अपने देश में तो आत्मशांति का प्रसाद बाँटा ही लेकिन अमेरिका भी गये और वहाँ के प्रेसीडेंट रुजवेल्ट ने उनसे बड़ी शांति पायी। यह सद्ग्रंथ पढ़कर मनन करने से व्यक्ति स्वयं भी शांति पाता है, परमात्मा में सराबोर हो जाता है तथा दूसरों को भी शांति देने की क्षमता उसमें आ जाती है । स्वामी रामतीर्थ बोलते थे : ''राम (स्वामी रामतीर्थ) के विचार से अत्यंत आश्चर्यजनक और सर्वोपरि श्रेष्ठ ग्रंथ, जो इस संसार में सूर्य के तले कभी लिखे गये, उनमें से 'श्री योगवासिष्ठ' एक ऐसा ग्रंथ है जिसे पढ़कर कोई भी व्यक्ति इस मनुष्यलोक में आत्मज्ञान पाये बिना नहीं रह सकता।''*

वेदांत ग्रंथ दो प्रकार के होते हैं : एक होते हैं प्रक्रिया ग्रंथ और दूसरे होते हैं सिद्धांत ग्रंथ।

पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश - इन पाँच स्थूल भूतों तथा सूक्ष्म भूतों की जानकारी, स्थूल भूतों से स्थूल शरीर कैसे बना ? सूक्ष्म भूतों से सूक्ष्म शरीर कैसे बना ? चैतन्यस्वरूप आत्मा इनसे पृथक् कैसे है ? - इस प्रकार जो ग्रंथ विभिन्न चरणों में, प्रक्रियात्मक ढंग से परब्रह्म-परमात्मा की समझ देते हैं, उन ग्रंथों को कहा जाता है 'प्रक्रिया ग्रंथ' । जैसे - पंचीकरण, विचारसागर, विचार-चंद्रोदय, पंचदशी आदि।

'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' सिद्धांत ग्रंथ है। इसमें कहानियाँ, संवाद, इतिहास - सब कहे गये हैं और घुमा-फिराकर वही सिद्धांत की सारभूत बात कही गयी है। पुराणों में राजा हरिश्चंद्र आदि पूर्वकालीन श्रेष्ठजनों के प्रेरक चरित्रों और उनकी रसमय धर्मचर्चाओं के द्वारा सत्य को समझाया गया है। इस प्रकार पुराणों में कथा-प्रसंग अधिक आते हैं और सार बात (आत्मा-परमात्मा की बात) का कहीं-कहीं संकेत है, परंतु 'श्री योगवासिष्ठ' में पद-पद पर सार बात है।

वसिष्ठजी कहते हैं : ''जिसका अंतःकरण मुक्ति के लिए खूब लालायित हो, सत्कर्म करके खूब शुद्ध हो गया हो तथा ध्यान करके खूब एकाग्र हो गया हो उसे यह उपदेश सुननेमात्र से आत्मसाक्षात्कार हो जायेगा। जिन लोगों को इस ग्रंथ में, इस ज्ञान में प्रीति नहीं है, वे अपरिपक्व हैं । उनको चाहिए कि व्रत, उपवास, तीर्थाटन, दान, यज्ञ, होम, हवन आदि करें। इन्हें करके जब उनका अंतःकरण परिपक्व होगा, तब उनको इसमें रुचि होगी ।'' 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' बार-बार विचारने योग्य है।

* (स्वामी रामतीर्थ, अरण्य संवाद (लेख व उपदेश), आठवाँ भाग, पृष्ठ क्र. : १२३)

श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार

आदर्श जीवन

रुपये-पैसे, मकान-जमीन सच्चा धन नहीं हैं; सच्चा धन है - मनुष्य का वह आदर्श जीवन, जिसमें भलाई-ही-भलाई भरी होती है। ऐसे सच्चे चरित्र का धनी पुरुष किसीको वाणी से उपदेश नहीं करता, उसके आचरण ही सबको उसीकी भाँति जीवन-निर्माण करने का उपदेश दिया करते हैं। उसके उपदेश किसी ग्रंथ-विशेष के आधार पर नहीं होते, उसके अपने जीवन से ही उनका प्रकाश होता है।

* इस प्रकार से आदर्शजीवन पुरुषों के द्वारा सहज ही सदा सबकी भलाई होती है, क्योंकि उनके पास बुराई रहती ही नहीं, जिसे वे किसीको दें। मधुर भाषण, विनम्रता, सत्य, सेवा, हितकारिता, क्षमा, त्याग, शांति, आनंद - ये उनके जीवन के सहज स्वरूपभूत गुण होते हैं।

* इस प्रकार के आदर्शजीवन पुरुष विषयासक्ति, भोग-कामना, निराशा, भय, विषाद, शोक, दुःख या अशांति के शिकार कभी नहीं होते। वे सदा शांत-सुखी रहते हैं और अपने आचरण तथा सद्व्यवहार से दूसरों के भय-विषादादि को मिटाकर उन्हें भी सुख-शांति प्रदान करते हैं।

* इस प्रकार के आदर्शजीवन पुरुष हर हालत में प्रसन्न तथा अपने सत्य आचरण पर डटे रहते हैं। भयंकर-से-भयंकर संकट में भी वे अपने सत्य से नहीं डिगते। वे न घबराते हैं, न अशांत होते हैं और न किसीका अनिष्ट चाहते हैं, अपितु हर अवस्था में प्रशांत, निश्चल और सबके सहज कल्याणकारी होते हैं।

* इस प्रकार के आदर्शजीवन पुरुष प्रभु पर, प्रभु की कृपा पर, प्रभु की उदारता पर, प्रभु के सौहार्द पर पूर्ण विश्वास रखते हैं। वे किसी पर भी - अपनी निंदा, अपमान, बुराई और अहित करनेवाले व्यक्तियों पर भी कभी क्रोध नहीं करते, कभी उनका अहित नहीं चाहते, बदला लेने की तो कल्पना ही नहीं करते, वरन् कुछ हुआ ही नहीं, यों मानकर सहज ही सबका ससम्मान हित करने में ही लगे रहते हैं।

* इस प्रकार के आदर्शजीवन पुरुष यह जानते हैं कि जो किसीको दुःख पहुँचाना चाहता है, किसीका अपमान करता है, गाली देता है, हानि करता है वह वस्तुतः मूर्ख है, क्योंकि दूसरे की हानि तो वह उसका वैसा प्रारब्ध हुए बिना कर नहीं सकता, अतः वह अपनी ही हानि करता है। उस अपने द्वारा ही अपनी हानि करनेवाले मूर्ख पर वे दया करते हैं। जो बदला लेने की इच्छा करते हैं, वे तो उसकी भाँति मूर्ख बन जाते हैं। सत्पुरुष वैसी मूर्खता नहीं करते।

* इस प्रकार के आदर्शजीवन पुरुषों का मन पूर्णरूप से आत्मस्थ या स्वस्थ रहता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, ईर्ष्या, भय, चिंता आदि रोग उनके मन को कभी दूषित नहीं कर सकते। उनका मन सदा-सर्वदा सद्भावों से भरा रहता है। वे सबमें सदा अपने को तथा अपने में सदा सबको भरा देखते हैं, अतएव वे कभी किसीको भी पराया नहीं मानते। अतः उनके द्वारा किसीका अनिष्ट या अहित कभी हो ही नहीं सकता। वे तो सदा सहज ही अपने शुद्ध भावों का वितरण करते हुए सबको शुद्ध बनाते रहते हैं।

* इस प्रकार के आदर्शजीवन पुरुष शांति के समुद्र, प्रेम के अखूट भंडार और सुख के अपरिमित स्रोत होते हैं। जो इनके संपर्क में आता है, वह भी शांति, प्रेम तथा सुख को प्राप्त कर लेता है।

* इस प्रकार के आदर्शजीवन पुरुषों के जीवन को ही अपना परम आदर्श मानकर चलोगे तो तुम भी आदर्शजीवन बनकर अपना और अन्य अनंत प्राणियों का कल्याण कर सकोगे।
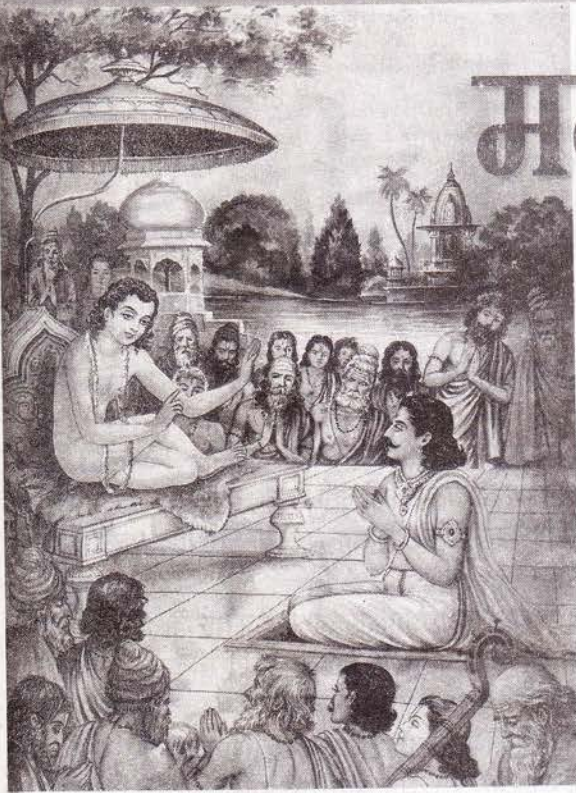
मनुष्यमात्र को क्या करना चाहिए ?

कौन-सी इच्छा की पूर्ति हेतु किस देव की उपासना करनी चाहिए ?

गतांक से आगे

श्री शुकदेवजी ने कहा : परीक्षित ! जो ब्रह्मतेज का इच्छुक हो वह देवगुरु बृहस्पति की, जिसे इन्द्रियों की विशेष शक्ति की कामना हो वह इंद्रदेव की और जिसे संतान की लालसा हो वह प्रजापतियों की उपासना करे । जिसे लक्ष्मी चाहिए वह मायादेवी की, जिसे तेज चाहिए वह अग्निदेव की, जिसे धन चाहिए वह वसुओं की और जिस प्रभावशाली पुरुष को वीरता की चाह हो उसे रुद्रों की उपासना करनी चाहिए। जिसे बहुत अन्न प्राप्त करने की इच्छा हो वह अदिति का, जिसे स्वर्ग की कामना हो वह अदिति के पुत्र देवताओं का, जिसे राज्य की अभिलाषा हो वह विश्वेदेवों का और जो प्रजा को अपने अनुकूल बनाने की इच्छा रखता हो उसे साध्य देवताओं का आराधन करना चाहिए । आयु की इच्छा से अश्विनीकुमारों का, पुष्टि की इच्छा से पृथ्वी का और प्रतिष्ठा की चाह हो तो लोकमाता पृथ्वी और द्यौ (आकाश) का सेवन (पूजन) करना चाहिए। सौंदर्य की चाह से गंधर्वों की, पत्नी की प्राप्ति के लिए उर्वशी अप्सरा की और सबका स्वामी बनने के लिए भगवान ब्रह्माजी की आराधना करनी चाहिए । जिसे यश की इच्छा हो वह यज्ञपुरुष (भगवान विष्णु) की, जिसे खजाने की लालसा हो वह वरुणदेव की, विद्या प्राप्त करने की आकांक्षा हो तो भगवान शंकर की और पति-पत्नी में परस्पर प्रेम बनाये रखने के लिए पार्वतीजी की उपासना करनी चाहिए। धर्म-उपार्जन करने के लिए भगवान विष्णु की, वंशपरंपरा की रक्षा के लिए पितरों की, बाधाओं से बचने के लिए यक्षों की और बलवान होने के लिए मरुद्‌गणों की आराधना करनी चाहिए। राज्य के लिए मन्वंतरों के अधिपति देवों को, भोगों के लिए चंद्रमा को और निष्कामता प्राप्त करने के लिए परम पुरुष नारायण को भजना चाहिए। और जो बुद्धिमान पुरुष है वह चाहे निष्काम हो, समस्त कामनाओं से युक्त हो अथवा मोक्ष चाहता हो - उसे तो तीव्र भक्तियोग के द्वारा केवल पुरुषोत्तम भगवान की ही आराधना करनी चाहिए। जितने भी उपासक हैं, उनका सबसे बड़ा हित इसीमें है कि वे भगवान के प्रेमी भक्तों का संग करके भगवान में अविचल प्रेम प्राप्त कर लें। ऐसे पुरुषों के सत्संग में जो भगवान की लीला-कथाएँ होती हैं, उनसे उस दुर्लभ ज्ञान की प्राप्ति होती है, जिससे संसार-सागर की त्रिगुणमयी तरंगमालाओं के थपेड़े शांत हो जाते हैं, हृदय शुद्ध होकर आनंद का अनुभव होने लगता है, इन्द्रियों के विषयों में आसक्ति नहीं रहती, कैवल्यमोक्ष का सर्वसम्मत मार्ग

जिस मनुष्य ने भगवत्प्रेमी संतों के चरणों की धूल कभी सिर पर नहीं चढ़ायी, वह जीता हुआ भी मुर्दा है । वह हृदय नहीं लोहा है, जो भगवान के मंगलमय नामों का श्रवण-कीर्तन करने पर भी पिघलकर उन्हींकी ओर बह नहीं जाता ।

भक्तियोग प्राप्त हो जाता है । भगवान की ऐसी रसमयी कथाओं का चस्का लग जाने पर भला कौन ऐसा है, जो उनमें प्रेम न करे।

शौनकजी ने कहा : सूतजी ! राजा परीक्षित ने शुकदेवजी की यह बात सुनकर उनसे और क्या पूछा ? वे तो सर्वज्ञ होने के साथ-ही-साथ मधुर वर्णन करने में भी बड़े निपुण थे। सूतजी ! आप तो सब कुछ जानते हैं। हम लोग उनकी वह बातचीत बड़े प्रेम से सुनना चाहते हैं, आप कृपा करके अवश्य सुनाइये; क्योंकि संतों की सभा में ऐसी ही बातें होती हैं, जिनका अंत भगवान की रसमयी लीला-कथा में ही होता है। पांडुनंदन महारथी राजा परीक्षित बड़े भगवद्‌भक्त थे। बाल्यावस्था में खिलौनों से खेलते समय भी वे श्रीकृष्णलीला का ही रस लेते थे । भगवन्मय श्रीशुकदेवजी भी जन्म से ही भगवत्परायण हैं। ऐसे संतों के सत्संग में भगवान के मंगलमय गुणों की दिव्य चर्चा अवश्य ही हुई होगी । जिसका समय भगवान श्रीकृष्ण के गुणों के गान अथवा श्रवण में व्यतीत हो रहा है, उसके अतिरिक्त सभी मनुष्यों की आयु व्यर्थ जा रही है । ये भगवान सूर्य प्रतिदिन अपने उदय और अस्त से उनकी आयु छीनते जा रहे हैं। क्या वृक्ष नहीं जीते ? क्या लुहार की धौंकनी साँस नहीं लेती ? गाँव के अन्य पालतू पशु क्या मनुष्यपशु की ही तरह खाते-पीते या मैथुन नहीं करते ? जिसके कान में भगवान श्रीकृष्ण की लीला-कथा कभी नहीं पड़ी, वह नर पशु, कुत्ते, ग्रामसूकर, ऊँट और गधे से भी गया बीता है।

सूतजी ! जो मनुष्य भगवान श्रीकृष्ण की कथा कभी नहीं सुनता, उसके कान बिल के समान हैं । जो जीभ भगवान की लीलाओं का गायन नहीं करती, वह मेढक की जीभ के समान टर्र-टर्र करनेवाली है; उसका तो न रहना ही अच्छा है । जो सिर कभी भगवान श्रीकृष्ण के चरणों में झुकता नहीं, वह रेशमी वस्त्र से सुसज्जित और मुकुट से युक्त होने पर भी बोझामात्र ही है । जो हाथ भगवान की सेवा-पूजा नहीं करते, वे सोने के कंगन से भूषित होने पर भी मुर्दे के हाथ हैं। जो आँखें भगवान की याद दिलानेवाली मूर्ति, तीर्थ, नदी आदि का दर्शन नहीं करतीं, वे मोरों की पाँख में बने हुए आँखों के चिह्न के समान निरर्थक हैं । मनुष्यों के वे पैर चलने की शक्ति रखने पर भी न चलनेवाले पेड़ों जैसे ही हैं, जो भगवान की लीला-स्थलियों की यात्रा नहीं करते। जिस मनुष्य ने भगवत्प्रेमी संतों के चरणों की धूल कभी सिर पर नहीं चढ़ायी, वह जीता हुआ भी मुर्दा है। जिस मनुष्य ने भगवान के चरणों पर चढ़ी हुई तुलसी की सुगंध लेकर उसकी सराहना नहीं की, वह श्वास लेता हुआ भी श्वासरहित शव है। सूतजी ! वह हृदय नहीं लोहा है, जो भगवान के मंगलमय नामों का श्रवण-कीर्तन करने पर भी पिघलकर उन्हींकी ओर बह नहीं जाता। जिस समय हृदय पिघल जाता है, उस समय नेत्रों में आँसू छलकने लगते हैं और शरीर का रोम-रोम खिल उठता हैं।

"यह सनातन धर्म का देश है। यह देश गिर अवश्य गया है परंतु निश्चय ही फिर उठेगा और ऐसा उठेगा कि दुनिया इसे देखकर दंग रह जायेगी। देखा नहीं है, नदी या समुद्र में लहरें जितनी नीचे उतरती हैं, उसके बाद उतनी ही तेजी-से ऊपर उठती हैं । यहाँ भी उसी प्रकार होगा । दिखता नहीं है पूर्व आकाश में अरुणोदय हुआ है, सूर्य उदित होने में अब अधिक विलंब नहीं है।"

- स्वामी विवेकानंदजी

कुंडलिनी योग

(संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से)
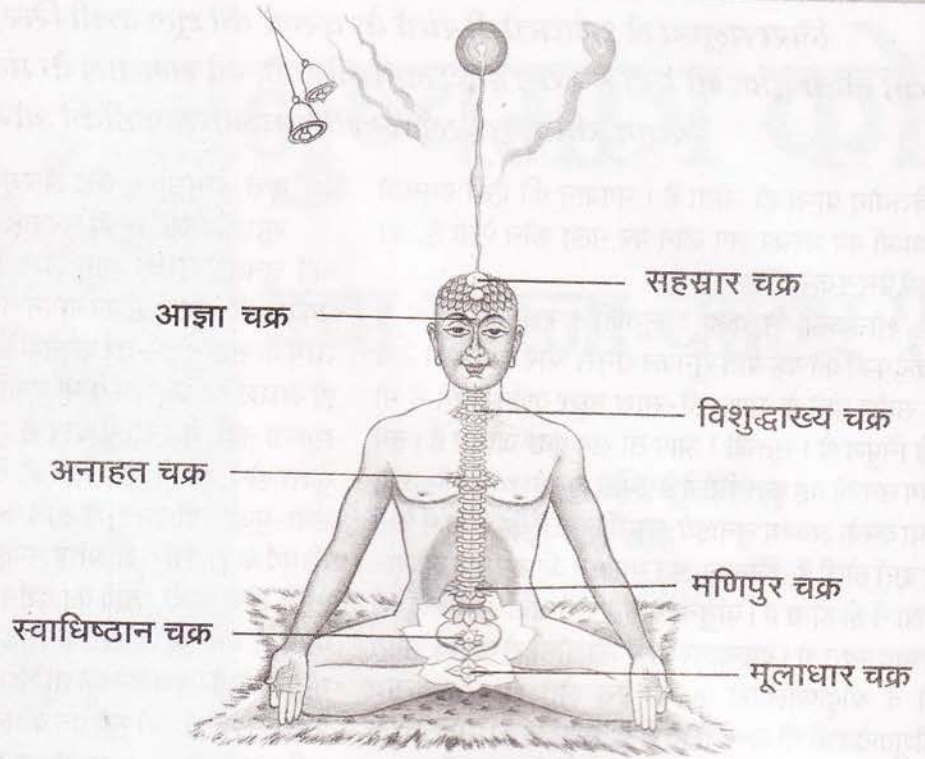
गतांक का शेष

शरीर में सात केन्द्र होते हैं । इनको रूपांतरित करने की प्रक्रिया का नाम है - महासाधना । इसे सिद्धयोग, शक्तिपात साधना, ध्यानयोग अथवा कुंडलिनी योग भी बोलते हैं।

इस कुंडलिनी योग साधना की बड़ी भारी महिमा है । यह योग होने लगे तो साधक इसे एकांत कमरे में दिल खोलकर होने दे, रोके नहीं। जब कभी नाचने का भाव आये तो दिल खोलकर नाच ले । कभी रोने का भाव आये तो दिल खोलकर रो ले। इस रोने में जो सुख और शांति मिलेगी वह संसारी को हँसने में भी नहीं मिलती है।

साधना के समय ईमानदारी से जो होता हो, साधक उसे रोके तो नुकसान होता है, किंतु सहज रूप से जो होता है उसे होने दे तो फायदा होता है।

कभी कोई दिखावा करके यश प्राप्त करने का यत्न करता है, समूह में किसीको देखकर स्वयं भी वैसा करने लग जाता है तो उसे नुकसान होता है। कोई संयमहीन हो, धातु-क्षीणता से पीड़ित हो, भुखमरी करता हो व अपनी क्षमता से अधिक करे तो उसे खुश्की चढ़ने का भय रहता है। इसीलिए यहाँ शिविरों में पहले से ही नियंत्रण रखते हुए योग-साधना कराते हैं । लाखों-करोड़ों में कोई ऐसी गलती कर बैठता होगा।

जिसे स्वप्नदोष की बीमारी हो या ऐसा कुछ हो वह ज्यादा उपवास-प्राणायाम न करे, नहीं तो वह योग में आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं कर पायेगा । ऐसे आदमी को थोड़ा संयम रखना चाहिए, 'यौवन-सुरक्षा' पुस्तक पढ़नी चाहिए ताकि आगे चलकर कोई परेशानी न हो।

लाखों साधक यहाँ ध्यान योग शिविर में आते हैं किंतु भगवान की दया से किसीको विपरीत असर नहीं हुआ। अनजाने में छिपी हुई तकलीफ उभर आती है और निकल जाती है। अनजाने में किसीको कृपा की किरण मिल जाती है तो उसे लगता है कि 'मुझे यह क्या हो रहा है ? ये झटके क्यों आ रहे हैं ? कोई बीमारी हो गयी है

क्या ?' लेकिन ऐसी बात नहीं है। अगर धैर्यपूर्वक नियम से साधना में लगे रहें तो आगे की यात्रा अपने-आप होने लगती है।

साधक ज्यों-ज्यों ध्यानस्थ होने लगता है, उसकी अंदर की शक्ति जगने लगती है । फिर उसे ध्यान करना नहीं पड़ता, ध्यान लगने लगता है। भगवान से प्रेम करना नहीं पड़ता, होने लगता है। हँसना-रोना नहीं पड़ता, प्रेम और विरह का भाव जगने लगता है। विरह से पाप-ताप जलते हैं और प्रेम से प्रभुरस बढ़ता है । प्रभुरस की हँसी ऐसी रसमय होती है कि हजारों संसारी रसों की हँसी उस पर कुर्बान है।

जंगल में झोंपड़ी बनाकर रहनेवाली शबरी जब तत्त्वज्ञान की बातें करती है तो लक्ष्मणजी भी दंग रह जाते हैं। तुकारामजी महाराज ने स्कूली विद्या तो कुछ खास नहीं पढ़ी थी किंतु उनके हृदय में जो ज्ञान प्रकट हुआ और उन्होंने जो अभंग गाये वे महाराष्ट्र के विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में पढ़ाये जाते हैं । कबीरजी किसी पाठशाला में पढ़ने नहीं गये थे लेकिन उन पर प्रबंध लिखकर लोग पी एच.डी. की उपाधि पा लेते हैं। ऐसे महापुरुषों की बाहर की पढ़ाई-लिखाई तो भले नहीं के बराबर हो किंतु जब अंदर की कुंडलिनी शक्ति जग जाती है, भीतर के खजाने का द्वार खुल जाता है, फिर जो ज्ञान प्रकट होता है वह अद्‌भुत होता है।

मेरे गुरुदेव पूज्य साँईं लीलाशाहजी महाराज भी स्कूल में न जा पाये थे । वे जब हस्ताक्षर करते तो उन्हें काफी समय लग जाता था । किंतु बड़े-बड़े चिकित्सक, बड़े-बड़े वकील, विद्वान तथा संत भी उनके संपर्क से अपने को उन्नत कर लेते थे।

'ज्ञानेश्वरी गीता' के छठे अध्याय में इस कुंडलिनी योग का वर्णन आता है। इसकी साधना करके लक्ष्य तक पहुँचनेवाला योगी देवों का देव हो जाता है। वह जहाँ कदम रखता है, वहाँ के रज-कण हीरे-मोतियों से भी ज्यादा कीमती हो जाते हैं। हीरे-मोतियों को बेचकर सुख के साधन लायें फिर उनका उपभोग करें तब सुखाभास मिलता है, सच्चा सुख नहीं मिलता और बाद में भी सुख की चाह बनी रहती है। लेकिन योगी जहाँ कदम रखते हैं, उस भूमि पर कोई अगर सच्चे भाव से जाता है तो उसे शुद्ध सुख ऐसे ही मिलने लगता है । ऐसे महापुरुषों की निगाहों के सामने बैठने से भी बहुत लाभ होता है।

नूरानी नजर साँ दिलबर दरवेशन मुखे निहाल करे छड्‌यो।

अर्थात् अपनी नूरानी नजर से महापुरुष ने मुझे निहाल कर दिया।

गौरांग की निगाहें जब कीर्तन करनेवालों पर पड़ती थीं तो वे लोग झूम उठते थे, आनंदित हो जाते थे । वल्लभाचार्य, रामानुजाचार्य, कबीरजी, नानकजी, मीराबाई जैसे नामी-अनामी महापुरुषों की निगाहों का जिन लोगों ने लाभ लिया होगा, उनको कितनी शक्ति और कितना आनंद मिला होगा!

महापुरुषों की निगाहों से शांति और आनंद के परमाणु बरसते हैं, इसीलिए उन महापुरुषों की सभा में अनायास ही सुख और आनंद मिलता है। महापुरुषों के संपर्क में आने से शराबी शराबी नहीं रहता, जुआरी जुआरी नहीं रहता, बीड़ी-सिगरेट पीनेवाला भी चुपचाप बैठकर सत्संगामृत का पान करता रहता है। जिनके अंदर आत्म-खजाना जाग्रत हो जाता है, उनके संपर्क से अद्‌भुत लाभ होता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, चिंता, भय आदि में गिरनेवाला दिल भी उनकी हाजिरी में सँभल जाता है । इसीलिए उन महापुरुषों के लिए कहते हैं:

तुम तसल्ली न दो सिर्फ बैठे ही रहो,
महफिल का रंग बदल जायेगा,
गिरता हुआ दिल भी सँभल जायेगा...

आपके अंदर भी सारे आनंद का, सारे ज्ञान का, सारी विद्याओं का खजाना भरा पड़ा है। आप भी अपने भीतर छुपे हुए परमात्मा का सामर्थ्य प्रकट करने के लिए अभी से कटिबद्ध हो जाओ तो काम बन जाय।

भैया ! समय बीता जा रहा है । जो छोड़ जाना है उसे कब तक पाते रहोगे ? अपने निश्चिंत आत्मा-परमात्मा का खजाना कब खोलोगे ?

यह कुंडलिनी योग की साधना है। जब कुंडलिनी कार्य करने लगती है तो शरीर-शुद्धि की चेष्टाएँ होने लगती हैं, मन अंतर्मुख होने लगता है और ध्यान करना नहीं पड़ता, होने लगता है।

वीर्ययुक्तता ही साधुता है और निर्वीर्यता ही पाप है, अतः बलवान और वीर्यवान बनने की चेष्टा करनी चाहिए।

- स्वामी विवेकानंदजी

अचिंत्य और अद्भुत पराक्रम, आवश्यक समग्र अनुपम मानसिक और शारीरिक शक्ति, प्रशंसनीय सद्गुण और दीर्घायुष्य केवल ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही प्राप्त किये जा सकते हैं। इसके विपरीत यदि तुम अपने जीवन की ब्रह्मचर्यरूपी नस काट डालोगे तो तुम्हारी शारीरिक-मानसिक शक्तियों की बरबादी होगी और तुम समस्त प्रकार के दुःखों एवं अधोगति के गर्त में गिर पड़ोगे। - प्रा. कृष्णराव

दुःख के मूल को नष्ट करने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन आवश्यक है।

- महात्मा बुद्ध

वीर्य मनुष्य को अमरत्व प्राप्त कराता है, अतः प्रत्येक स्त्री-पुरुष को ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करना चाहिए।

- स्वामी नित्यानंदजी

शरीर के रक्षण के लिए ब्रह्मचर्य सर्वाधिक आवश्यक है। जिसने उसका पालन नहीं किया, उसका जीवन धिक्कार योग्य है।

- स्वामी आत्मानंदजी

ब्रह्मचर्य से ही ब्रह्मस्वरूप के दर्शन होते हैं। हे प्रभो ! निष्कामता प्रदान कर इस दास पर कृपा कीजिये।

- महर्षि भारद्वाज

ब्रह्मचारी को कभी ज्ञात ही नहीं होता कि व्याधिग्रस्त दिन कैसा होता है। उसकी पाचनशक्ति सदैव नियमित होती है। उसकी वृद्धावस्था बाल्यावस्था जैसी ही आनंदमयी होती है।

- डॉ. काउ एन. (एम.डी.)

विषयसम्बंधी सभी उत्तेजक बातों से बचे रहने से विषय-वासना धीरे-धीरे कम हो जाती है।

- मनोवैज्ञानिक कोरल

नवयुवकों के लिए ब्रह्मचर्य शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक - तीनों दृष्टियों से उनकी रक्षा करता है।

- डॉ. पेरियर

विद्वानों, चिंतकों और

मैं विद्यार्थियों और युवकों से यही कहता हूँ कि वे ब्रह्मचर्य और बल की उपासना करें। बिना शक्ति व बुद्धि के अधिकारों की रक्षा और प्राप्ति नहीं हो सकती। देश की स्वतंत्रता वीरों पर ही निर्भर है।

- लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक

दुःख के सर्वथा नाश के लिए ब्रह्मचर्य का आचरण करो। जो लोग ब्रह्मचर्यहीन हैं, उन्हें पग-पग पर दुःख उठाने पड़ते हैं। यदि एक ही कृत्य से सारे विश्व को वश में करना चाहो तो शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करो।

- भक्त वामन

ब्रह्म के लिए चर्या (आचरण) ही ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य अर्थात् सभी इन्द्रियों पर संयम, सभी इन्द्रियों का उचित उपयोग।

- संत विनोबा भावे

ब्रह्मचर्य जीवन-वृक्ष का पुष्प है और प्रतिभा, पवित्रता, वीरता आदि गुण उसके कतिपय फल हैं।

- महात्मा थोरो

समाज में सुख-शांति की वृद्धि के लिए स्त्री-पुरुष दोनों को ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करना चाहिए। इससे मानव-जीवन का विकास होता है और समाज की भित्ति बलवान होती है।

- महात्मा टॉलस्टॉय

कहते हैं कि जिस प्रकार पवित्रता से आत्मा को कोई हानि नहीं होती, उसी प्रकार शरीर को ब्रह्मचर्य से कोई क्षति नहीं पहुँचती। इन्द्रिय-संयम सबसे उत्तम आचरण है।

- सर जेम्स मैगट

ब्रह्मचारी अपना प्रत्येक कार्य निरंतर करता रहता है। उसे प्रायः थकान नहीं आती। वह कभी चिंतातुर नहीं होता। उसका शरीर सुदृढ़ होता है। उसका मुख तेजस्वी होता है। उसका स्वभाव आनंदी और उत्साही होता है।

- डॉ. एक्सन

चिकित्सकों की दृष्टि में ब्रह्मचर्य

अमृततुल्य गौदुग्ध

व नवास के समय धर्मराज युधिष्ठिर प्यास से व्याकुल होकर तालाब पर जल पीने गये तो वहाँ यक्ष ने युधिष्ठिर से अनेक प्रश्न किये । उनमें एक प्रश्न यह भी था कि **'अमृतं किम् ?'** अर्थात् अमृत क्या है ? युधिष्ठिर ने उत्तर दिया **'गवाममृतम्'** अर्थात् गौ का दूध अमृत है। **(महाभारत, वन पर्व : ३१३.६६)**

आज वैज्ञानिक भी अपने प्रयोगों के आधार पर गौदुग्ध की महत्ता स्वीकार कर रहे हैं । उन्होंने गौदुग्ध का रासायनिक विश्लेषण कर ज्ञात किया है कि गाय के दूध में वे सारे पौष्टिक तत्त्व विद्यमान होते हैं, जो मानव-स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं । गाय का दूध गुणों की खान है । भारतीय आयुर्वेद-शास्त्र के मनीषियों ने प्राचीन काल में ही उत्तम स्वास्थ्यवर्धक पेय पदार्थ एवं एक उत्तम औषध के रूप में गाय के दूध की महत्ता को पहचानकर उसे शास्त्रों में वर्णित कर दिया था । **'निघंटु रत्नाकर'** में गाय के दूध को रसायन कहा गया है।

प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम् ।

'गाय का दूध जीवनशक्ति प्रदान करनेवाले द्रव्यों में सर्वश्रेष्ठ और रसायन है।'

(चरक संहिता, सूत्रस्थानम् : २७.२१८)

आयुर्वेद में अनेक प्रकार के कल्प बताये गये हैं, जिनका प्रयोग चिकित्साशास्त्री जीर्ण-शीर्ण शरीर के पुनर्निर्माण में करते रहे हैं । दीर्घकालीन अनुभवों के बाद दुग्धकल्प को सर्वाधिक लाभदायक पाया गया । इससे शरीर में बल, वीर्य की वृद्धि होती है और अंग-अंग में तेजस्विता आती है । पाचन-प्रणाली सुव्यवस्थित हो जाती है । दुग्धकल्प से शरीर में स्थित हानिकारक विषैले पदार्थ मूत्र के द्वारा बाहर निष्कासित किये जाते हैं, जिससे शरीर शुद्ध हो जाता है । त्वचा की मल-निवारक शक्ति में वृद्धि होती है तथा अनेक रोग जड़ से नष्ट हो जाते हैं । गौदुग्ध में आयु-संवर्धन की आश्चर्यजनक शक्ति विद्यमान है।

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम् ।

'गौओ ! आप दुर्बल शरीरवाले व्यक्ति को हृष्ट-पुष्ट कर देती हो एवं निस्तेज को देखने में सुंदर बना देती हो।'

(अथर्ववेद : कांड ४, सूक्त २१, मंत्र ६)

देशी गायें सौम्य और सात्त्विक होती हैं, इसलिए उनका दूध भी सात्त्विक होता है, जिसके सेवन से बुद्धि तीक्ष्ण एवं स्वभाव सौम्य व शांत बनता है । गौदुग्ध मानव की शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक शक्ति में वृद्धि करता है।

'गौदुग्ध का सेवन दोपहर के पहले वीर्यवर्धक व अग्निदीपक तथा दोपहर में बलकारक, कफ को विनष्ट करनेवाला, पित्त को हरनेवाला और मंदाग्नि को नष्ट करनेवाला, बाल्यावस्था में शरीर की वृद्धि करनेवाला, क्षय-अवस्था में क्षय का निवारण करनेवाला एवं वृद्धावस्था में शुक्र की रक्षा करनेवाला होता है । रात्रि में इसका सेवन हितकर, अनेक दोषों का शमन करनेवाला एवं नेत्रों के लिए लाभप्रद है ऐसा ऋषियों द्वारा कहा गया है।'

(भावप्रकाश, पूर्व खंड : ६.१४.३९)

देशी गाय का दूध स्वादिष्ट, स्निग्ध, लघु, रुचिकर, मेधाजनक, नेत्रज्योतिवर्धक, कांतिजनक, शक्तिदायक तथा मन को प्रसन्न करनेवाला है । साथ ही यह रक्तपित्त, अतिसार, अपस्मार, मूत्रकृच्छ, अर्श, पांडु, क्षय, हृदयरोग, उदरगुल्म, उदरशूल, दाह जैसे रोगों के लिए भी औषधि का कार्य करता है । इसके अलावा यह अनिद्रा, श्वेतप्रदर, नपुंसकता, रक्तचाप, पथरी आदि रोगों में भी

लाभदायक है। धारोष्ण दुग्ध (तुरंत निकाले गये दूध) का सेवन सर्वरोग-विनाशक कहा गया है (इसके लिए दूध दुहने से पहले गाय के थनों को दो-तीन बार धो लें)।

हाल ही में 'डूडी विश्वविद्यालय' के शोधकर्ताओं द्वारा इंग्लैंड, स्कॉटलैंड, इटली तथा बेल्जियम के कुल १५० बच्चों पर एक अध्ययन किया गया। इन बच्चों को दो समूहों में बाँटा गया। एक समूह उन बच्चों का था, जो नियमित रूप से दूध पीते थे और दूसरे समूह में वे बच्चे थे, जो दूध नहीं पीते थे। अध्ययन के बाद शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि अन्य पोषक आहार का सेवन करनेवाले लेकिन दूध न पीनेवाले बच्चों के मुकाबले में दूध पीनेवाले बच्चे ज्यादा समझदार व ताकतवर होते हैं। इतना ही नहीं यदि दूध को बच्चों के आहार में आवश्यक रूप से सम्मिलित किया जाय तो इससे बच्चों का बेहतर विकास होता है। अध्ययन के अनुसार दूध के सेवन से न केवल दिमागी शक्ति में वृद्धि होती है, बल्कि समस्याओं का भी बेहतर ढंग से समाधान कर पाना संभव होता है। यह भी पता चला कि दूध पीनेवाले बच्चों में निम्न रक्तचाप से लड़ने की क्षमता भी अधिक होती है।

'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान' के औषधि-विभाग के अनुसार हड्डियों के रोगों से बचने के लिए छोटी उम्र से ही दूध पीने की आदत डालनी चाहिए। नियमित रूप से दूध पीनेवाले लोगों में बीमारियाँ नहीं पनपतीं, उन्हें कमजोरी नहीं सताती। पहले के समय में बच्चों को युवावस्था तक गौदुग्ध की ही अधिक खुराक दी जाती थी। इससे उन्हें सौ वर्षों तक सशक्त और नीरोग जीवन जीने का लाभ मिलता था, साथ ही वे वृद्धावस्था तक तेजस्विता बनाये रखने में सक्षम होते थे।

कोष्ठशुद्धि कल्प

कुछ रसायन द्रव्य सप्तधातुओं की वृद्धि कर शरीर को बलवान व वीर्यवान बनाते हैं, जैसे - दूध, घी, सुवर्ण आदि और कुछ सप्तधातुओं की शुद्धि कर शरीर को निर्मल बनाते हैं और धातुपोषण का मार्ग खुला कर देते हैं, जैसे - आँवला, हर्रे, विडंग आदि। ऐसे सप्तधातु-वृद्धिकर एवं शरीरशोधक रसायन द्रव्यों के सम्मिश्रण से बनाया गया एक श्रेष्ठ आयुर्वेदिक कल्प है 'कोष्ठशुद्धि कल्प'।

यह कल्प शरीर में संचित मल, दोष तथा अन्य हानिकारक विजातीय द्रव्यों को शरीर से बाहर निकालकर शरीर को शुद्ध करता है। इससे रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। सभी अंग-प्रत्यंग तथा इन्द्रियाँ निर्मल हो जाती हैं व उनकी कार्यक्षमता बढ़ जाती है। पूरे शरीर में शक्ति, ताजगी व स्फूर्ति का संचार होता है।

कल्प के घटक-द्रव्य तथा उनके गुणधर्म

(१) **विडंग** : यह जठराग्निवर्धक, आमपाचक, रक्तशुद्धिकर, श्रेष्ठ कृमिनाशक, मस्तिष्क को बल प्रदान करनेवाला रसायन द्रव्य है। यह दूषित कफ के कारण उत्पन्न होनेवाले कृमियों का नाश करता है, अतः बालकों के लिए हितकर है।

(२) **तुलसी बीज** : ये स्निग्ध, दीपक, पाचक, त्रिदोषशामक, कृमिनाशक, मूत्र खुलकर लानेवाले, हृदय के लिए हितकारी व उत्कृष्ट शुक्रधातुवर्धक हैं।

(३) **कुबेराक्ष** : यह अग्निदीपक, रक्तशोधक, ज्वरनाशक व कृमिनाशक है तथा यकृत व प्लीहा की कार्यक्षमता बढ़ाता है।

(४) **इन्द्रजव** : यह त्रिदोषशामक, कृमिनाशक व आँतों को बल प्रदान करनेवाला है।

कल्प के लाभ

* यह कल्प कोष्ठ अर्थात् पेट के सभी प्रमुख अंगों जैसे यकृत (लीवर), वृक्क (किडनी), प्लीहा (स्प्लीन), जठर तथा आँतों को साफ कर उनकी कार्यक्षमता बढ़ाता है। जिससे कई संभावित रोगों से रक्षा होती है।
* यह जठराग्नि को प्रदीप्त करता है। अतः मंदाग्नि, संग्रहणी, पेचिश, बवासीर, उदरशूल, प्रवाहिका, कब्ज, अफरा आदि पेट की बीमारियों में लाभदायी है।
* यह रक्तशुद्धिकर होने के कारण त्वचा-विकारों में भी लाभदायी है।
* यह कृमि व कफ नाशक है, अतः बालकों के लिए विशेष हितकर है।

३० दिन तक इस कल्प का नियमित सेवन करने से कोष्ठशुद्धि होकर शरीर के समुचित विकास में मदद मिलती है।

श्री वाहकारी प्राणायाम-विधिक्रम

(गतांक से आगे)

सूर्यभेदी प्राणायाम : जैसे सूर्य सारे सौरमंडल को उष्णता प्रदान करता है, वैसे ही सूर्यभेदी प्राणायाम से शरीर के संपूर्ण नाड़ी-मंडल में ऊष्मा का संचार हो जाता है। यह प्राणायाम समस्त योग-चक्रों को जागृत करने में सहायक है। विशुद्धाख्य व आज्ञा चक्र पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है।

विधि : प्रातः पद्मासन अथवा सुखासन में बैठकर बायें नथुने को बंद करें और दायें नथुने से धीरे-धीरे अधिक-से-अधिक गहरा श्वास भरें। श्वास लेते समय आवाज न हो इसका ख्याल रखें। अब अपनी क्षमता के अनुसार श्वास भीतर ही रोक रखें। (कुंभक की यह अवधि कुछ दिनों के अभ्यास से धीरे-धीरे एक-डेढ़ मिनट तक बढ़ायी जा सकती है।) जब श्वास न रोक सकें तब बायें नथुने से धीरे-धीरे बाहर छोड़ें। झटके से न छोड़ें। इस प्रकार ३ से ५ प्राणायाम करें। कुछ दिन के अभ्यास से ललाट से पसीना छूटने लगता है।

लाभ :

* इससे सूर्य नाड़ी क्रियाशील हो जाती है।
* पाँच सूर्यभेदी प्राणायाम नियमित रूप से करने से कफ-सम्बंधी समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं।
* सर्दी, खाँसी, जुकाम दूर हो जाते हैं व पुराना जमा हुआ कफ निकल जाता है।
* मस्तिष्क का शोधन होता है। मस्तिष्क के किसी हिस्से में सूक्ष्म कृमि हो गये हों तो वे भी नष्ट हो जाते हैं।
* कंठकूप पर दबाव देकर अर्थात् जालंधर बंध लगाकर प्राणायाम करने से हायपो थायरॉइड तथा हायपर थायरॉइड में लाभ होता है। कंठ, जिह्वा तथा स्वर के दोष दूर होते हैं।
* निम्न रक्तचापवालों के लिए यह लाभदायी है।
* इससे जठराग्नि तीव्र होती है तथा पेट के कृमि नष्ट हो जाते हैं। वायुदोष दूर हो जाते हैं। संधिवात, गठिया वात, कमर का दर्द तथा सायटिका में भी यह लाभदायी है।

सावधानियाँ :

१. कुंभक अपनी शक्ति से अधिक कदापि न करें।
२. इस प्राणायाम का अभ्यास सर्दियों में करें। गर्मी के दिनों में तथा पित्तप्रधान व्यक्तियों के लिए यह हितकारी नहीं है।
३. स्वस्थ व्यक्ति उष्णता तथा शीतलता का संतुलन बनाये रखने के लिए सूर्यभेदी प्राणायाम के साथ उतने ही चंद्रभेदी प्राणायाम भी करे।

त्रिबंध के साथ करने पर प्राणायाम विशेष लाभदायी होते हैं।

चंद्रभेदी प्राणायाम :

विधि : यह सूर्यभेदी से ठीक विपरीत है। इसमें बायें नथुने से श्वास लेकर आभ्यंतर कुंभक करें। बाद में दाहिने नथुने से धीरे-धीरे श्वास छोड़ दें। इस प्रकार ३ से ५ प्राणायाम करें।

लाभ :

* इससे चंद्र नाड़ी क्रियाशील हो जाती है।
* शरीर के समस्त नाड़ी-मंडल में शीतलता का संचार होता है।
* ये ५ प्राणायाम नियमित करने से पित्तप्रकोप शांत होता है। आँखों की जलन, नाक से खून बहना, पित्तप्रकोप के कारण रात को नींद न आना, स्त्रियों में अत्यधिक मासिक स्राव आदि दोष दूर होते हैं।
* मन शांत हो जाता है। शरीर की थकान दूर हो जाती है।
* उच्च रक्तचापवालों के लिए यह लाभदायी है।

भोजन : एक नित्य यज्ञकर्म

(गतांक से आगे)

(२) अम्ल रस : अम्ल रस पचने में हलका, उष्ण, स्निग्ध व वातशामक होता है। यह भोजन में रुचि उत्पन्न करता है व विभिन्न पाचक स्रावों को बढ़ाता है। यह मल-मूत्र का सुखपूर्वक निष्कासन करनेवाला, मन को उद्दीप्त करनेवाला, इन्द्रियों को दृढ़ बनानेवाला व उत्साह बढ़ानेवाला है। यह रस हृदय के लिए विशेष हितकर है।

अम्ल रसयुक्त पदार्थ : फालसा, आँवला, अनार, करौंदा आदि।

अम्ल रस के अति सेवन से हानि : अम्लीय पदार्थों के अति सेवन से रक्त व पित्त दूषित हो जाते हैं। परिणामतः कंठ, छाती व हृदय में जलन होने लगती है और पांडु, रक्तपित्त, अम्लपित्त जैसी व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। फोड़े-फुंसियाँ, खुजली आदि लक्षण पैदा होते हैं, दाँत खट्टे, दृष्टि मंद तथा शरीर शिथिल हो जाता है। दुर्बल व कृश व्यक्तियों में सूजन आने लगती है। घाव तथा फोड़े पककर उनमें मवाद भर जाता है।

उपरोक्त लक्षण उत्पन्न होने पर अम्लीय पदार्थों का सेवन पूर्णतः बंद कर गेहूँ, मूँग, अंगूर, किशमिश आदि मधुर रसात्मक, पित्तशामक द्रव्यों का उपयोग करें।

सामान्यतः अम्ल रस पित्तवर्धक है, परंतु अनार व आँवला अम्लीय होते हुए भी पित्तशामक हैं।

(३) लवण रस : यह स्निग्ध, उष्ण, तीक्ष्ण, पित्तवर्धक, वातशामक व कफ को पिघलानेवाला है। यह उत्तम दीपक, पाचक, संशोधक अर्थात् स्रोतों की शुद्धि करनेवाला, मल-मूत्र निस्सारक, अंगों की जकड़न, कठिनता, अवरोध व संचित दोषों को दूर कर उन्हें कोमल बनानेवाला है। इसके सेवन से पाचक स्रावों का निर्माण होता है, जिससे भोजन का सम्यक् पाचन होता है।

लवण रसयुक्त पदार्थ : सभी प्रकार के नमक (सेंधा, सामुद्र आदि) व क्षार।

लवण रस के अति सेवन से हानि : लवण रस के अति सेवन से पित्त प्रकुपित होकर रक्त को दूषित करता है, जिससे बार-बार प्यास लगना, आँखों के आगे अँधेरा छाना, शरीर शिथिल हो जाना, ग्लानि, मूर्च्छा आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। दाँत ढीले होकर गिरने लगते हैं। बाल सफेद होकर झड़ने लगते हैं। त्वचा पर झुर्रियाँ पड़ने लगती हैं तथा त्वचा का वर्ण व कांति नष्ट हो जाती है। नेत्र, कर्ण, जिह्वा आदि ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति क्षीण हो जाती है। बल, ओज तथा रोगप्रतिकारक शक्ति का नाश होता है। शुक्रधातु पतली होने लगती है, इससे स्वप्नदोष, पुंसत्वनाश जैसी व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। कुष्ठरोग, त्वचा के विभिन्न विकार, शोथ (सूजन) व उच्च रक्तचाप जैसी दूषित रक्तजन्य व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। अधिक मात्रा में नमक का सेवन करनेवाले व्यक्ति शारीरिक-मानसिक क्लेश व रोग आदि का प्रहार सहने में सक्षम नहीं होते। वे जल्दी थक जाते हैं।

उपरोक्त लक्षण उत्पन्न होने पर नमक का सेवन पूर्णतः बंद कर मधुर, कड़वे व कसैले पदार्थों का सेवन करना चाहिए। सामान्यतया लवण रसयुक्त पदार्थ पित्त-प्रकोपक होते हैं, परंतु सेंधा नमक इसका अपवाद है। **सेंधा नमक के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार के नमक आँखों के लिए हानिकारक हैं।** (क्रमशः)

सावधानी : सर्दियों में तथा कफ प्रकृतिवालों के लिए यह हितकर नहीं है। निम्न रक्तचापवालों के लिए भी यह प्राणायाम निषिद्ध है।

हमारे शरीर की सभी क्रियाओं का नियमन सौम्य (शीत) तत्त्व और आग्नेय (उष्ण) तत्त्व के द्वारा ही होता है। इनमें विषमता हो जाने पर विभिन्न व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। जैसे - सौम्य तत्त्व में वृद्धि हो जाने पर शीत गुण की अधिकता से वात-कफजन्य विकारों का प्रादुर्भाव हो जाता है तथा आग्नेय तत्त्व की वृद्धि हो जाने पर उष्ण गुण की अधिकता से पित्तजन्य व्याधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। परंतु दोनों तत्त्वों में संतुलन बना रहे तो स्वास्थ्य व दीर्घायुष्य की प्राप्ति होती है। यह संतुलन बनाये रखने के लिए स्वस्थ व्यक्ति सूर्यभेदी तथा चंद्रभेदी प्राणायाम का समान मात्रा में नियमित अभ्यास करे। इन तत्त्वों में कभी विषमता हो जाय तो उत्पन्न लक्षणों के अनुसार प्राणायाम कर पुनः संतुलन स्थापित करे। जैसे - सर्दी हो तो सूर्यभेदी करे और गर्मी हो तब चंद्रभेदी करे। आयुर्वेद, एलोपैथी, होमियोपैथी आदि किसी भी चिकित्सा-पद्धति से व्याधियों में इतना शीघ्र व सात्त्विक लाभ नहीं होता, जितना इस प्राण-चिकित्सा के अभ्यास से होता है।

ब्रह्मवृक्ष पलाश के विभिन्न लाभ

वसंत ऋतु का आगमन होते ही पलाश का वृक्ष अपने मनमोहक फूलों से दूर से ही नेत्रों को आकर्षित करने लगता है। कहा जाता है कि देव-दानव युद्ध में जब देवताओं ने दैत्यों पर आग्नेयास्त्र का प्रहार किया था, तब जो चिंगारियाँ धरती पर बिखर गयीं, वे पलाश के वृक्ष बनकर पृथ्वी को शोभायमान कर रही हैं। शास्त्रों ने पलाश के वृक्ष को ब्रह्मवृक्ष के नाम से सम्मानित किया है। इसके पत्ते, फूल, बीज, छाल, मूल - ये सभी औषधीय गुणों से भरपूर हैं।

भारत में प्राचीन काल से होली खेलने हेतु पलाश के फूलों अर्थात् टेसुओं से बने रंग का प्रयोग होता आया है। इसके पीछे वैज्ञानिक रहस्य छुपा हुआ है। टेसुओं का रंग शरीर की अत्यधिक गर्मी को शांत करता है। त्वचा को स्वच्छ व रक्त को शुद्ध करके अनेक संक्रामक रोगों से हमारी रक्षा करता है।

पलाश के पत्तों की भी महिमा है। इससे बनी पत्तलों एवं दोनों में भोजन करने से चाँदी के पात्र में भोजन करने के समान लाभ होता है। पलाश के बीज उत्कृष्ट कृमिनाशक हैं। इसकी जड़ का रस नेत्ररोगों में लाभदायी है।

सौंदर्यवर्धन के लिए एक सरल प्रयोग : टेसुओं को पानी में उबालकर उस पानी से चेहरा रगड़कर धोने से चेहरे के दाग, कील-मुँहासे मिट जाते हैं। इस पानी से स्नान करने से त्वचा की कांति व सौंदर्य बढ़ता है। शरीर में ताजगी व उत्साह आता है।

औषध रूप में प्रयोग

मूत्र की रुकावट तथा कष्टप्रद मासिक धर्म : लगभग १०० ग्राम टेसुओं को २०० मि.ली. पानी में धीमी आँच पर उबालें। आधा पानी शेष रहने पर छान लें। उसमें एक ग्राम यवक्षार (जवाखार) मिलाकर पीड़ित व्यक्ति को पिलायें तथा गर्म-गर्म फूल पेड़ू पर बाँध दें। इससे पेशाब की रुकावट दूर हो जाती है। ताजे फूलों की जगह फूलों के चूर्ण का भी उपयोग किया जा सकता है। गर्म-गर्म फूल पेड़ू पर बाँधने से मासिक धर्म के समय होनेवाली पीड़ा व रुकावट दूर हो जाती है।

नेत्ररोग : पलाश की जड़ का ४-४ बूँद रस आँखों में डालने से आँखों की जलन, स्राव, मोतियाबिंद, फूली आदि में लाभ होता है।

रंगों का स्वास्थ्य पर प्रभाव

शक्ति, सौंदर्य व स्वास्थ्य प्रदायक सूर्य की रंगीन किरणें स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी हैं। 'सूर्यकिरण चिकित्सा-पद्धति' में इनके द्वारा रोगों का उपचार किया जाता है। इसमें जिस रंग की सूर्यकिरणों से उपचार करना हो, उस रंग के सेलोफेइन पेपर (पारदर्शक रंगीन कागज) को प्रभावित अंग पर लगाया जाता है या काँच की रंगीन बोतल* में पानी या तेल आदि डालकर सूर्यकिरणों में निश्चित समय तक रख उसका प्रयोग किया जाता है। (लाल किरण-तप्त जल का प्रयोग प्राकृतिक चिकित्सक की सलाह से ही करें।)

विभिन्न रंगों की सूर्यकिरणों के लाभ

लाल रंग : जोड़ों के दर्द, गठिया, मोच, सूजन, लकवा, पोलियो, साइटिका, कमरदर्द एवं रक्ताल्पता में अत्यंत लाभकारी है।

नारंगी रंग : दमा, तिल्ली के बढ़ने, आँतों की शिथिलता, मूत्राशय के रोग, लकवा, उपदंश आदि में लाभकारी है।

पीला रंग : पेट, जिगर, तिल्ली एवं फेफड़ों के रोगों, कब्ज, अजीर्ण, कृमि रोग, लकवा, गुदभ्रंश, वात एवं कफ जनित रोगों में लाभकारी है।

हरा रंग : आँख व त्वचा के रोगों, फोड़े-फुंसी, दाद, खाज, कमर व मेरुदंड के निचले भाग के रोगों, हाथ-पैरों का फटना, रक्तपित्त, बहनेवाला फोड़ा, बवासीर आदि में लाभकारी है। हरे रंग की बोतल का सूर्यतप्त तेल बालों में लगाने से असमय सफेद होनेवाले बाल काले होते हैं व सिर के पिछले भाग में लगाने से स्वप्नदोष व धातु-सम्बंधी रोग दूर होते हैं।

आसमानी रंग : सिर की पीड़ा, संग्रहणी, पेचिश, ज्वर, श्वास, पथरी, अतिसार व मूत्रविकार में लाभकारी है।

नीला रंग : सिरदर्द, असमय बालों का सफेद होना व गिरना, मुँह के छाले, फोड़े-फुंसी व गले के रोगों में लाभकारी है तथा कीटाणुनाशक है।

बैंगनी रंग : हैजा, अतिसार, मस्तिष्क-दौर्बल्य एवं हृदय की धड़कन में अत्यंत लाभकारी है।

* आवश्यक रंग की बोतल उपलब्ध न होने पर उस रंग का सेलोफेइन पेपर रंगहीन बोतल पर लपेटकर उसका उपयोग किया जाता है।

आग से रक्षा

हमने पूजा करने के लिए घर के एक कमरे को मंदिर जैसा बनाया है। दिनांक २३ मई २००३, शुक्रवार की रात्रि को अचानक उस पूजामंदिर में आग लग गयी। सुबह ४ बजे हमने कमरा खोलकर देखा तो मंदिर के बायें हिस्से में आग लगी थी। वहाँ रखे हुए सभी फोटो एवं साहित्य जलकर खाक हो गया परंतु मंदिर के दायें हिस्से को कुछ भी नहीं हुआ जहाँ पूज्य बापूजी का फोटो रखा था। उस ओर के रेशमी पर्दे भी जलने से बच गये ! आग ने मंदिर की चौखट को भी छुआ। मंदिर की बाहरी दीवार के पास पेट्रोल से भरी मोटर साइकिल पड़ी थी। यदि आग बाहर पहुँचती तो सारा घर जलकर भस्म हो सकता था। सद्गुरुदेव पूज्य बापूजी को पूरे परिवार की ओर से कोटि-कोटि प्रणाम।

- ए. एस. भटनागर
१८७१, सेक्टर-७-डी, फरीदाबाद (हरि.)।

आयुर्वेद का चमत्कार

मेरे सिर में गर्दन के निकट एक फोड़ा हो गया था, जिसे डॉक्टर 'कार्बन्कल' कहते हैं। मेरा हृदय बेहोशी के लिए अयोग्य होने के कारण दिल्ली के सिटी क्लीनिक के मुख्य डॉक्टर ने इसका ऑपरेशन करने से इनकार कर दिया।

मैं संकट में था। १४ फरवरी २००३ को दिल्ली आश्रम के वैद्य को दिखाया तो उन्होंने ऑपरेशन न कराने की राय दी और कहा कि ''पूर्ण विश्वास से आप आयुर्वेदिक चिकित्सा करायें, आप बिल्कुल अच्छे हो जायेंगे।'' मैंने उनकी राय के अनुसार किया और लगभग डेढ़ माह में पूज्य गुरुदेव के कृपापात्र वैद्य श्री विनोदजी ने आयुर्वेदिक उपचार से इस भयंकर जानलेवा कार्बन्कल को ठीक कर दिया। मैं संस्था का आभारी हूँ।

- ओमप्रकाश गुप्ता, गाजियाबाद (उ.प्र.)।

संस्था समाचार

['ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि]

४ मार्च से १५ मार्च तक पूज्यश्री की ज्ञानगंगा का प्रवाह मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में प्रवाहित हुआ। १२ दिन के इस प्रवास के दौरान दोनों राज्यों के कुल ७ स्थानों पर अभूतपूर्व सत्संग-कार्यक्रम संपन्न हुए। सभी स्थानों पर उमड़े विराट बुद्धिमान समुदाय में संतश्री के प्रति श्रद्धा और करीब से एक झलक पाने की ललक ने एक अभूतपूर्व दृश्य का सृजन किया।

४ से ६ मार्च तक हुए **कटनी (म.प्र.)** के कार्यक्रम में **४ मार्च** की शाम को सिंधी भाषी लोगों के लिए सिंधी भाषा में सत्संग का विशेष सत्र संपन्न हुआ। अपनी मातृभाषा में सत्संग व मार्गदर्शन पाकर स्थानीय सिंधी समुदाय खुशी से झूम उठा। परमात्मा से प्रेम करने की रीति सिखाते हुए पूज्यश्री ने जब 'ॐ... ॐ... शांतिः ॐ... ॐ... ॐ... माधुर्य ॐ' का मधुर जप कराया तब सारे सत्संग-पंडाल में शांति व माधुर्य का साम्राज्य छा गया।

ब्यौहारी (म.प्र.) में **६ मार्च** को साध्वी वर्षा बहन का प्रवचन हुआ व **७ मार्च** को पूज्यश्री द्वारा सत्संग-कार्यक्रम की पूर्णाहुति हुई। इसी दिन यहाँ संपन्न हुए भंडारे में गरीबों को भोजन के अलावा वस्त्र, बर्तन, टोपियाँ व नकद सहायता प्रदान की गयी।

७ मार्च को पूज्यश्री का रात्रि-विश्राम हनुमंत कुंज (शिवपुरी) में रहा। **८ मार्च** (महाशिवरात्रि) को पूज्यश्री नर्मदा के उद्गम-स्थल अमरकंटक पहुँचे। इसके पूर्व रास्ते में **शहडोल (म.प्र.)** वासियों को दर्शन-सत्संग के एक सत्र का लाभ मिला।

१० मार्च की शाम को **बिलासपुर (छ.ग.)** में साध्वी वर्षा बहन और श्री सुरेशानंदजी का प्रवचन हुआ। **११ मार्च** को पूज्यश्री का सत्संग एवं दीक्षा-समारोह संपन्न हुआ।

पूज्यश्री के व्यासपीठ पर पधारने से पूर्व यहाँ जमकर बारिश हुई और ओले भी पड़े। बारिश के पानी से तर-बतर श्रोता-समुदाय को धैर्य व शांति पूर्वक बैठे देखकर पूज्यश्री ने उनकी सराहना की और कहा : ''यह सत्संग का ही प्रभाव है।''

यूँ तो दुनिया में देने को दिये जाते हैं नजराने बहुत।
लेकिन है कोई 'शै'[1] जो सत्संग का मुकाबला करे ?

छत्तीसगढ़ के **रायपुर** में **१२ व १३ मार्च** को, **भिलाई** में **१४ मार्च** को और **राजनांदगाँव** में **१५ मार्च** को यही नजारा देखने को मिला। करीब-करीब बसे इन नगरों में हुए सत्संग-कार्यक्रमों में श्रोताओं की विराट भीड़ उमड़ने से विशाल सत्संग-पंडाल भी नन्हे साबित हुए। धूप में खड़े-खड़े सत्संग-दर्शन का लाभ ले रहे भक्तों की ओर पूज्यश्री का ध्यान बार-बार आकृष्ट होता रहा। अंततः स्थानाभाव के कारण पूज्यश्री ने उन्हें धूप से आंशिक रक्षा हेतु सिर पर कपड़ा रखने की सलाह दी।

रायपुर के भक्त **१३ मार्च** को पलाश के फूलों से निर्मित प्राकृतिक रंग से पूज्यश्री के हाथों रँगकर धनभागी हुए। छत्तीसगढ़ को अपने ज्ञानामृत से तर-बतर कर पूज्यश्री महाराष्ट्र पहुँचे, जहाँ **१६ मार्च** को **गोंदिया**, **१७ व १८ मार्च** को **अकोला**, **१८ (शाम) व १९ मार्च** को **जालना** और **२० से २२ मार्च** तक **उल्हासनगर** में ज्ञान, भक्ति व योग की त्रिवेणी प्रवाहित हुई। इसमें अवगाहन कर लाखों लोगों ने तृप्ति-संतुष्टि का अनुभव किया। सूरत आश्रम में होनेवाले होलिकोत्सव के तर्ज पर उल्हासनगर में भी **२२ मार्च** को वहाँ का विराट पुण्यात्मा-समुदाय पूज्यश्री के संग होली के रंग में खूब रँगा। होलिकोत्सव के पूर्व ही वहाँ होलिकोत्सव का मनोहारी दृश्य सृजित हुआ।

होली के रंग पूज्य बापूजी के संग...

सूरत (गुज.) : सूरत आश्रम में **२५ से २७ मार्च** तक 'ध्यान योग साधना शिविर' संपन्न हुआ । इस वर्ष होलिकोत्सव हेतु यहाँ आये भक्तों की विराट संख्या ने गत वर्षों के सारे रिकार्ड तोड़ दिये।

जिस प्रकार अमदावादवासियों के लिए हर वर्ष का गुरुपूर्णिमा महोत्सव वर्षभर में मनाये गये आनंद-उल्लास के सभी उत्सवों में सबसे बड़े महोत्सव का रूप धारण करता है, उसी प्रकार हर वर्ष का होलिकोत्सव सूरतवासियों के लिए आनंद-उल्लास का सबसे बड़ा वार्षिक महोत्सव सिद्ध होता है।

आप विश्व में कहीं भी जाइये, सद्गुरु के सान्निध्य में भक्तों का ऐसा विशाल रंगारंग कार्यक्रम कहीं भी देखने को नहीं मिलेगा। यह एक ऐसा मनमोहक रंगारंग कार्यक्रम है जिसके दौरान एक प्रहर आपको देखने को मिलेगी पलाश आदि प्राकृतिक रंगों की रंगबिरंगी फुहार तो दूसरे प्रहर में आत्मज्ञान, आत्मशांति के सत्संग-अमृत की फुहार... कभी हृदय को छू जानेवाले, जीवन धन्य बनानेवाले निःस्वार्थ-निर्दोष भगवत्प्रेम के रंग की फुहार तो कभी हृदय में समझ की सुंदर ज्योति जगानेवाले बोधप्रद कथा-प्रसंगों, जीवन-प्रसंगों एवं चुटकी लेनेवाली हास्य-विनोदयुक्त बातों की फुहार... कभी ध्यान की गहराइयों में दिव्य अनुभूतियों की फुहार तो कभी कर्णमधुर कीर्तन के तालबद्ध सुरों की फुहार...

यही नजारा रहा इस वर्ष के होलिकोत्सव में भी। रंग बनाने हेतु पूज्य बापूजी के साधकों ने गंगोत्री से शुद्ध गंगोदक मँगवाया और उसे पलाश के फूलों आदि के रंग में मंत्रोच्चारणपूर्वक मिश्रित कर विशुद्ध, प्राकृतिक, पवित्र रंग बनाया। जब बापूजी के करकमलों द्वारा इस रंग की बौछार होने लगी, तब भक्तों के तन के साथ-साथ उनका मन भी रँगने लगा, क्योंकि बापूजी की उस बौछार में मिला होता है आत्मिक प्रेम का रंग, सर्वकल्याण-सर्वमांगल्य के संकल्प का रंग, नूरानी निगाहों का रंग, सबको सच्चा सुख मिले इस आशीर्वाद का रंग... ऐसे में भक्तहृदय बोल उठता है :

कुछ तो है... कुछ तो है...
कुछ तो है बापूजी के सत्संग-होली रंग में...
शीतलता छा जाती है अंग-अंग में...
दिल सुकून पाता है प्रभु-रंग में...
चित्त डूब जाता है आत्मानंद में...
अहं विलय हो जाता है गुरु-गोविंद में...
मति रँग जाती है गुरुज्ञान में...
नैया पार हो जाती है गुरुसंग में...

होली का रंग, गुरुदेव का संग और उनका पावन सत्संग जब भक्तों को एक साथ प्राप्त होता है, तब उनके सद्भाग्य की तुलना किससे की जाय ? इस रंगोत्सव का दृश्य बड़ा ही अद्भुत था। रंगवृष्टि के साथ भक्तों के तन की तपन मिट रही थी, मन की मलिनता धुल रही थी, चित्त की भ्रमणा भाग रही थी और हृदय खुली आँख भाव-समाधि के आनंद का अनुभव कर रहा था। भक्तों के विशाल समुदाय का झूम उठना... नाचना... खुशी से 'हरि ॐ' का गुंजन... पूज्यश्री द्वारा रंगों की बौछार... आहा ! स्मृतिमात्र से वह दृश्य आज भी आँखों के सामने नृत्य करने लगता है। सभी आनंदित... सभी खुशहाल... एक चिरस्मृति मनःपटल पर अंकित करते हुए विदाई ली इस आनंद-उल्लास के पावन पर्व होली ने...

यदि आप इस होलिकोत्सव में शामिल न हो पाये हों तो इस वर्णन को पढ़कर आपको भी लग रहा होगा कि 'अगले वर्ष पूज्य बापूजी के होलिकोत्सव में अवश्य भाग लेंगे, वहाँ के इस रंगारंग कार्यक्रम को जी भरके देखेंगे।' इस महोत्सव में स्वयं उपस्थित होकर अपने हृदय को रँगने हेतु आपको अगले वर्ष तक इंतजार करना पड़ेगा, परंतु इसके दर्शन-श्रवण का आनंद लेकर अपने नयनों को तृप्त करने हेतु इंतजार की कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि आपकी सेवा में प्रस्तुत है इस महोत्सव की वी.सी.डी. का सेट और साथ में मिलेगी १० वी.सी.डी. पर १ मनपसंद वी.सी.डी. की भेंट ! जिसमें हैं होली के रंगारंग महोत्सव के अलावा पूज्यश्री की अनुभवसंपन्न वाणी में प्रह्लाद की उक्तियाँ और ईश्वरप्राप्ति की ५५ कुंजियाँ। आपके मन-बुद्धिरूपी ताले में इनमें से जो कुंजी लग जाय, लगाइये।

यहाँ होली महोत्सव का दिव्य संदेश देते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''आज के दिन सत्य, शांति, परमेश्वरीय प्रेम, दृढ़ता की विजय हुई थी । यह हिरण्यकशिपु की आसुरी वृत्ति तथा होलिकारूपी कपट के पराभव का दिन है। जो भक्त परम पुरुष परमात्मा में दृढ़ निष्ठावान हैं, उनके आगे प्रकृति अपना नियम बदल लेती है। अग्नि उन्हें जला नहीं सकती। पानी उन्हें डुबा नहीं सकता। हिंसक पशु उनके मित्र बन जाते हैं। समस्त प्रकृति उनकी दासी बन जाती है, उनके अनुकूल हो जाती है। इसकी याद दिलानेवाला यह होली का पवित्र दिन है।

होली अर्थात् हो... ली... जो हो गया, सो बीत गया और प्रह्लाद अर्थात् राग-द्वेष-अहंता छोड़कर विशेष आह्लादित, प्रसन्न रहनेवाला। प्रह्लाद की तरह सब परिस्थितियों में प्रसन्न और ईश्वर के रंग में रँगे रहिये । पलाश के प्राकृतिक रंग से प्राकृतिक शरीर को, मधुर भावों से मन को और सेवा-सुमिरन से स्व को रँगिये। प्रह्लाद की नाईं हर परिस्थिति में सम रहने का, चित्त में ईश्वरीय सुख और ईश्वरीय सामर्थ्य संचित करने का संदेश देनेवाला उत्सव है - होलिकोत्सव।''

गोंदिया (महा.)

कबिरा दर्शन संत के
साहिब आवे याद।
लेखे में वो ही घडी
बाकी के दिन बाद॥
पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का स्वर्णिम अवसर पाकर बड़भागी हुए यहाँ के सत्संगी।

भिलाई (छ.ग.)

संतों के प्यारे, भगवान के दुलारे भक्तों का यह सैलाब उमड़ा है पूज्यश्री की सत्संग-सुधा का पान करने। ऐसे में कैमरे की खिडकी छोटी पड जाय तो क्या आश्चर्य!

उल्हासनगर (महा.)

यहाँ उमड़ा सत्संगियों का विशाल सिंधु उनके पूज्य बापूजी व ब्रह्मज्ञान के सत्संग के प्रति अपार प्रेम को ही दर्शाता है।

धन्य है संतों की यह भवतरण नौका, जिसमें हर किसीको प्रवेश है ! अपने कर्म को ही प्रभुपूजा बनाकर कर्मयोग साधने की कुंजी पा रहे हैं रायपुर (छ.ग.) के भक्त और मुख्यमंत्री डॉ. रमणसिंह ।

विषय रस में मस्त व्यक्ति यम के द्वार पहुँचता है, परंतु सत्संग रस में मस्त सत्संगी भव से पार हो जाता है। ऐसे महिमावान, सुरदुर्लभ सत्संग व संत-सान्निध्य को प्राप्त कर धन्य-धन्य हो उठे कटनी (म.प्र.) के भक्तजन !

पूज्य बापूजी के दर्शन-सत्संग-सान्निध्य के लिए लालायित जालना (महा.) वासियों के लिए पूज्यश्री का मात्र एक सत्र का सत्संग भी महापर्व बन गया।

POSTAL REGISTRATION NO. GUJ-1132 LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENSE NO. 207 (DATE OF ISSUE 22-5-2003 & VALID UP TO 31-12-2005). POSTING FROM AHMEDABAD 2-15 OF EVERY MONTH. ✲ MBI PATRIKA CHANNEL, MUMBAI-101, WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO. NW-9 REGD NO. TECH/47-833/2003-05 POSTING FROM MUMBAI 9 & 10th OF EVERY MONTH. ✲ FOREIGN POSTING 5 & 6 OF EVERY MONTH FROM AIRPORT PO. - 400099. ✲ DELHI REGD. NO. DL-11513/2003-05 WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO.-U(C) 232/2003-05 POSTING FROM DELHI 5-6 OF EVERY MONTH.